एंग्लो इंडियन उपन्यास और उपनिवेश

वैभव सिंह

1857 की महान क्रांति ने बड़े पैमाने पर साहित्य सामग्री को जन्म दिया है। इनमें रिपोर्टें, पत्र, गोपनीय दस्तावेज, अदालत की रिपोर्ट, समाचारपत्रों के विश्लेषण, इतिहास ग्रंथ आदि सभी कुछ शामिल हैं। इस क्रांति को विषय बना कर बड़े पैमाने पर अंग्रेजी में उपन्यासों का लेखन भी हुआ है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 70 उपन्यास इस विद्रोह को मुख्य या गौण विषय बना कर लिखे गये थे। आजादी के बाद भी कुछ उपन्यास इस थीम पर लिखे गये। अंग्रेज कैसे हिन्दुस्तानियों को अदर (अन्य) के रूप में देखते थे और उपनिवेशों की संस्कृति के बरक्स अपने सेल्फ (स्व) को प्रदर्शित व निर्मित करते थे, इसकी व्याख्या करने में ये उपन्यास सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग किये जाने चाहिए। इन्हें म्यूटिनी नॉवेल की श्रेणी में रख कर इनका विश्लेषण करने का प्रयास अंग्रेजी शोधकर्ताओं के बीच हुआ है। पर 1857 की क्रांति त्रासदी, बर्बरता व उथल पुथल से भरी घटनाओं का इतना विराट कोलाज है कि उसके प्रति आकर्षण सभी स्रोतों से जानकारियां जुटाने की दिशा में हमें चलने की प्रेरणा देता है। ये उपन्यास सिर्फ अंग्रेजी समाज की दास्तान को बयान नहीं करते हैं, बल्कि उनकी निगाह से देखे हुए भारतीय समाज की चिन्ताओं व संघर्षों की छवियां भी इनमें उपस्थित हैं, इसलिए इन उपन्यासों का विश्लेषण आवश्यक हो जाता है। ये उपन्यास अपने सीने पर कट्टर राजनीतिक पूर्वग्रहों का बोझ लादे हुए हैं, फिर भी इनमें विद्रोह का संचालन करने वाली देसी ताकतों की अनुगूंज सुनी जा सकती है। विद्रोह के महाकाव्यात्मक आयाम पर कुछ अंग्रेज लेखक तो इतना मुग्ध थे कि उन्होंने यहां तक कह दिया था कि बगैर कल्पना या फैण्टेसी का मिश्रण किये अगर हम विद्रोह की घटनाओं को यथातथ्य प्रस्तुत कर दें तो भी उसे पढ़ना किसी उपन्यास से कम रोचक नहीं होगा। हम प्रायः किसी घटना या स्थिति से जुड़े अंतिम सत्य की तलाश के लिए ज्ञान की यात्रा आरम्भ करते हैं। पर असल चुनौती होती है अंतिम सत्य के बजाय उस स्थिति घटना के सम्बंध में विविध दृष्टिकोणों के ज्ञान को अर्जित करना। इसलिए हिन्दी या अंग्रेजी के स्रोतों के नकली विभाजन में फंसे बगैर 1857 के सम्बंध में समस्त स्रोतों का प्रयोग ही दृष्टिकोणों के युद्ध की बारीकियों तक हमें पहुंचा सकता है। इन उपन्यासों का 1934 में सबसे पहले अध्ययन करने वाले भूपाल सिंह ने इन रचनाओं की उपेक्षा की ओर इशारा करते हुए लिखा था– दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अंग्रेजी में भारतीयों के लेखन पर अधिक ध्यान दिया जाता है, पर भारतीयों के बारे में अंग्रेजों के लेखन को धीरे धीरे भुलाया जाता रहा।[1]

इन उपन्यासों के जरिये हम अंग्रेजों को भी सिर्फ शासक या ईस्ट इंडिया कम्पनी के एजेण्ट नहीं बल्कि स्वाभाविक मानवीय कमजोरियों वाले चरित्रों के रूप में देखने की शुरुआत करते हैं। ऐसे चरित्र के रूप में जिन्हें साम्राज्यवाद अपने हितों के लिए इस्तेमाल करता है और इसके लिए उनके व्यवहार, आचरण व निर्णयों को निश्चित ढांचों में ढलने के लिए बाध्य कर देता है। इस लेख में एंग्लो इंडियन लेखकों की 1857 पर आधारित रचनाओं को लिया गया है, हालांकि एंग्लो इंडियन लेखन की परिधि काफी व्यापक है। यह 18वीं सदी के उत्तरार्ध से लेकर 20वीं सदी तक फैली हुई है। इनकी लोकप्रियता भी काफी संदिग्ध रही है क्योंकि भारत का अंग्रेजी समाज भी, जिसे कहते हैं

tadbhav.com home page

प्योर इंग्लिश लिटरेचर, उसमें अधिक रुचि रखता था, न कि उस एंग्लो इंडियन लेखन में जो भारत में उसकी समस्याओं व स्थितियों को केन्द्र में रख कर लिखा जाता था। पर रोमांस व साहसिक कार्यों से जुड़ी घटनाओं की उपलब्धता की दृष्टि से अंग्रेज लेखकों के लिए 1857 का दौर सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो गया था और इसी वजह से इस थीम पर बड़ी मात्रा में उपन्यास लेखन हुआ भी।

ये उपन्यास दिखाते हैं कि 1857 की घटना इंग्लैण्ड में किसी प्रकार से राष्ट्रीय संकट के रूप में देखी जा रही थी। अपार खूनखराबा, गांवों का उजाड़ा जाना, कानपुर, लखनऊ व दिल्ली जैसे शहरों का ध्वंस, इन सभी ने आम जनमानस में हिस्टीरिया का रूप ग्रहण कर लिया था। कहीं सिर पर नाचता यह भय भी था कि ऐसा ही कोई अन्य विद्रोह ब्रिटिश राज के अंतिम समापन का क्षण भी बन सकता है। इसलिए ये उपन्यास अंग्रेजों के प्रजातीय गौरव में विश्वास की स्थापना के लक्ष्य से खुद को बांध लेते हैं। इनमें विक्टोरियाई पराक्रमी पुरुषों के मानदंडों पर लड़ाई में हिस्सा लेने वाले अंग्रेजी नायकों के चरित्रों की गरिमापूर्ण गाथाएं तैयार की गयीं। पहले ये नायक घने जंगलों में शेर, चीतों का शिकार करते हैं, पोलो खेलते हैं और घुड़सवारी के खेल में बहादुरी का प्रदर्शन करते हैं। बाद में उपनिवेशों में पैदा होने वाली बगावतों को मसलते हैं और उनके सही प्रबंधन की क्षमता के प्रमाणा पेश करते हैं। पब्लिक स्कूलों की संस्कृति में दीक्षित इन मर्दों से अपेक्षा की जाती थी कि वे विशेष गुणों से लैस रहेंगे, अन्यथा उपनिवेश उनके हाथ से निकल जायेंगे।

उल्लेखनीय है कि उपन्यास यूरोप की उस समय तक की सर्वाधिक विकसित विधा थी और उन्नीसवीं सदी एक अर्थ में अंग्रेजी उपन्यासों की ही नहीं बल्कि जर्मन, फ्रेंच व रूसी उपन्यासों के लेखन के मामले में भी स्वर्णिम सदी थी। डिकेंस, थॉमस हार्डी, फ्लाबेयर, जेन ऑस्टेन, टालस्टा और सैमुअल बटलर आदि उपन्यासकारों ने अपनी सर्वाधिक चर्चित कृतियों से इस सदी को समृद्ध किया था। उपन्यासों के बारे में बार बार दोहराया जाता है कि वह आधुनिक युग का महाकाव्य है और मध्यवर्ग के गठन व विकास से उपन्यासों का भी विकास हुआ है। पर उपन्यास का प्रयोग व लेखन इतनी भिन्न भिन्न परिस्थितियों व उद्देश्यों के बीच हुआ है कि सिर्फ उसे मध्यवर्ग की जीवनशैली व रुचि के प्रसार से जोड़ कर देखना अत्यधिक सरलीकरण होगा। खुद आधुनिक युग की जो बर्बरताएं हैं, उसका भी पूरा चित्र सामने लाने में उपन्यास विधा में कई प्रकार के राजनीतिक समझौते किये जाते रहे हैं। उपन्यास का जन्म तब हुआ जब राज्य, राष्ट्र व नये ढंग के साम्राज्य अस्तित्व में आये। यानी उपन्यास के जन्म का दौर भी वही है जब दुनिया में व्यवस्थित ढंग से साम्राज्यवाद की बर्बर लूटपाट आरम्भ हुई। जिस तरह से आज चांद पर विजय का अभियान चल रहा है, वहां पानी ढूंढने के लिए पैसों को पानी की तरह बहाया जा रहा है, उसी तरह 300 साल पहले दुनिया के अज्ञात संसाधनों व भूगोल पर विजय की लिप्सा सिर्फ मानवीय जिज्ञासा नहीं बल्कि राजनीतिक अभियान में तब्दील हो चुकी थी। मुक्ति के साथ साथ औपनिवेशिक दमन व युद्ध के भी नये नये स्वरूप उभरे और उपन्यास को उपनिवेशवाद का कल्प तैयार करने में साम्राज्यवाद का हथियार भी बना लिया गया। 19वीं सदी में लूट व वर्चस्व के लिए अंग्रेजी सेनाएं पूरी दुनिया में अंग्रेजी पूंजीपति व व्यापारियों की ओर से युद्ध कर रही थीं। इन सभी युद्धों के बारे में एडवेन्चर नॉवेल लिखे गये और कई बार तो जो लेखक 1857 के युद्ध पर लिख रहे थे, वही लेखक अफ्रीका, क्रीमिया, बर्मा व रूस के युद्धों पर केन्द्रित उपन्यास भी लिख रहे थे।[2]

युद्धकालीन प्रसंगों पर केन्द्रित ये उपन्यास अपने पूर्वग्रहों के प्रदर्शन के मामले में अधिक निःस्संकोची व अभिमान से भरे हुए भी हैं। इनके लिए युद्ध मानवता की पराजय नहीं बल्कि उपनिवेशवाद की विजय के कारण स्मरणीय तथा महत्वपूर्ण हैं। युद्धों की हिंसा न तो भयभीत करती है, न अपराधबोध जगाती है, बल्कि विजयोल्लास के क्षणों का सृजन करती है। वहां युद्धों को सर्वाधिक क्रूर तरीके से जीतना जरूरी है जिससे पराजित जातियों को सबक मिल सके कि अपने अपराजेय शासकों से टकराने

tadbhav.com home page

का परिणाम कितना भयावह हो सकता है और दोनों के बीच अंतर बरकरार रहे। मानवतावादी दृष्टि के विरोध के कारण ही सम्भवतः ये उपन्यास राजनीतिक दस्तावेज तो बन गये पर उनका साहित्यिक मूल्य स्थापित नहीं हो सका।

एक आकलन के मुताबिक 1857 से 1890 तक 30 उपन्यास इस विषय पर लिखे जा चुके थे।[3] उसके बाद इतने ही उपन्यास और लिखे गये जिनमें क्रांति को ब्रिटिश नजरिये से निरंतर प्रस्तुत किया गया। क्रांति के भारतीय नायक व नायिकाएं क्रूर, वहशी, युद्ध में अकुशल व अदूरदर्शी बनाये जाते रहे जबकि युद्ध के शिकार व युद्ध करने वाले अंग्रेज शांति, विवेक व सभ्यता के मूल्यों के प्रतीक बन गये। 1857 के बारे में ब्रिटिश नजरिये को इसलिए भी उपन्यासों में पुनरुत्पादित किया गया क्योंकि अंततः अंग्रेजी जानने वाले ब्रिटिश पाठक ही इन्हें पढ़ सकते थे। यह पाठक वर्ग उपनिवेशों के उत्पीड़न के बारे में नहीं बल्कि उन पर विजय अभियान की रोमांचक कहानियों की तलाश में अधिक था। इसलिए यह आवश्यक था कि पाठकों के दृष्टिकोण से सामंजस्य रखने वाली कृति की ही रचना की जाये। इससे साम्राज्य का भी हित पूरा होता था और पाठक को भी आकृष्ट करना आसान था। इस प्रकार 1857 की थीम पर लिखे गये अंग्रेजी उपन्यासों में साम्राज्य, पाठक व लेखक तीनों के हित परस्पर जुड़ जाते थे। यह वही दौर था जब दुनिया में बड़े पैमाने पर साम्राज्य की स्थापना व प्रचार में उदारवादी, रूढ़िवादी, शेयर होल्डर, कम्पनी डायरेक्टर, सामाजिक डार्विनवादी, प्रजातिवादी, मुक्त बाजार के हिमायती, ईसाई मिशनरियां, बैंक, सांसद, पब्लिक स्कूल, हथियारों की कम्पनियां व तस्कर सभी अपना अपना योगदान दे रहे थे।[4] उपन्यास लेखकों को भी आखिरकार साम्राज्य निर्माण के मिशन का अंग बना लिया गया। इन उपन्यासों ने साम्राज्यवाद को एक ओर प्रजातिवादी आधार पर समर्थन प्रदान किया तो दूसरी ओर प्रजातिवाद को स्वाभाविक व वैज्ञानिक मानते हुए साम्राज्य के विस्तार को अनिवार्य बताया। प्रायः इनमें प्रजाति ही केन्द्र में है और विशाल शत्रुतापूर्ण देसी आबादी के बीच गोरी प्रजाति के कारनामों को किसी महान ऐतिहासिक मिशन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

कुछ प्रमुख उपन्यास

1857 पर लिख गये आरम्भिक उपन्यासों में कल्पना व रोचकता के स्थान पर घटनाओं का ब्यौरा अधिक मिलता है क्योंकि उस समय प्रायः युद्ध में शामिल लोग ही अपने अनुभवों को सीधे सीधे पन्नों पर उतार रहे थे। इस विषय पर पहला उपन्यास एडवर्ड मनी का *द वाइफ एंड द वार्ड* (1859) प्रकाशित हुआ था। इसमें एक ओर अंग्रेज स्त्री पुरुषों के प्रेम प्रसंगों का वर्णन है तो दूसरी ओर बिठूर में नाना साहेब द्वारा किये गये विद्रोह का वर्णन है जिसकी चपेट में आकर कई अंग्रेज मारे जाते हैं। कहानी यह है कि दीनापुर में पटना में रह रहे एक अंग्रेज जज की बेटी बीट्रिस प्लेन आती है और दो अंग्रेज अधिकारी उससे प्रेम करने लगते हैं। होड़ में जब एक अंग्रेज जीत जाता है तो दोनों का विवाह हो जाता है। बाद में दोनों की बेटी मरियन पेरिस जब लंदन से आती है तो उसी समय कानपुर में विद्रोह की शुरुआत हो चुकी होती है। उपन्यास में नाना साहब को कामुक व व्यभिचारी चरित्र दिखाया गया है जिसकी आंखों में आंखें डालने भर से अंग्रेज युवतियां थर्रा जाती हैं। उन्हें अपनी इज्जत लुटने का डर सताने लगता है। जब लड़ाई आरम्भ होती है तो मरियन अपने मां बाप से यह वायदा करा लेती है कि भारतीयों के हाथ पड़ने की अगर नौबत आयी तो वे उसे गोली से उड़ा देंगे। सती चौरा घाट पर जब करीब 60 अंग्रेज नाव पर जाते समय तोप के गोलों का शिकार होते हैं और नाना साहब मरियन को अपने पास लाने का हुक्म देते हैं तब उसका पिता वादे के मुताबिक अंतिम बार उसे चूम कर गोली मार देता है। इसके बाद वह किसी तरह नदी के किनारे पहुंच कर नाना साहब को मारने की चेष्टा करता है, पर खुद मारा जाता है। इस उपन्यास का रचनाकार स्वयं भी एक फौजी अफसर था और

tadbhav.com home page

उसने अंग्रेज छावनी के जीवन का विस्तार से वर्णन किया है। वहां के नाचगाने, खेल, पार्टियां, रोमांचक गतिविधियां, शराबखोरी व खानपान आदि की व्यापक झलक मिलती है। मरियन के चरित्र के रूप में आज्ञाकारी, सतीत्व की रक्षा करने वाली विक्टोरियन स्त्री का चरित्र सामने आता है जो सिर्फ अपनी देह को नहीं बल्कि गोरी प्रजाति के गौरव को कलंकित होने से बचाती है। उसका शरीर एक विक्टोरियन संस्थान के रूप में कलंकित व अपवित्र किये जाने के खतरों से घिरा है। बलात्कार का भय व सेक्सुअल हिस्टीरिया को उपन्यास के कथानक में इस तरह समायोजित किया गया है कि उसके सामने भारतीयों की अधीन प्रजाति और अधिक हीनतर साबित होने लगती है। यह अंग्रेजों के लिए अकल्पनीय था कि उनकी स्त्रियों पर हीनतर प्रजाति के समझे जाने वाले भारतीय पुरुष किसी प्रकार से वर्चस्व स्थापित करें। इसीलिए हिन्दू स्त्रियों के मध्यकालीन जौहर की तरह अंग्रेज स्त्रियों को भी यौन शुचिता के लिए जीवन त्याग करने के कठिन रास्ते का चुनाव करते दिखाया गया। औपनिवेशिक दौर में प्रजातिवादी मेमसाहब की धारणा को भी बड़े पैमाने पर निर्मित किया गया और जिस तरह भारतीय औरतें पर्दा प्रथा को अपनाती थीं, उसी तर्ज पर प्रजातीय अलगाव अपने में पर्दे की तरह था। एक अंग्रेज स्त्री ने तो यहां तक लिखा था— गोरे मर्द चाहते हैं कि जैसे घर के जनाना वाले हिस्से में हिन्दू, मुस्लिम स्त्रियां आम लोगों की नजरों से दूर रहती हैं, उसी तरह गोरी स्त्रियां भी भारतीयों की नजरों से दूर रहें। जब तक भद्र वर्ग का भारतीय अपनी पत्नी से अंग्रेजों को नहीं मिलाता, अंग्रेज पुरुष भी गोरी स्त्रियों को भारतीयों से मिलने का अवसर नहीं देते हैं।[5] इस तरह के कई दृष्टांत इन उपन्यासों में मिलते हैं जहां अंग्रेज स्त्रियों की नैतिक उच्चता के प्रश्न को प्रजातीय श्रेष्ठता के गुण के साथ मिला कर प्रस्तुत किया गया है।

विद्रोह को आधार बना कर हाफिज अलार्द ने *'नरगिस'* (1869) नामक उपन्यास की रचना की थी। उपन्यास का पूरा नाम था *नरगिस—ए टेल ऑफ इंडियन म्यूटिनी एंड बिस्मिल्लाह ऑर हैप्पी डेज इन कश्मीर।* इस उपन्यास की कथा दो हिस्सों में विभाजित है। पहले हिस्से में नरगिस नामक नर्तकी की जीवन गाथा है तो दूसरे में कश्मीर से सम्बंधित प्रेमकथा है और विद्रोह से इसका किसी तरह सम्बंध नहीं है। उपन्यास के पहले खंड में नरिगस ब्रिटिश राज की सहायता करती है और मुगल दरबार में नाचने का काम करती है। वह एक फौजी अफसर लेफ्टिनेण्ट ला अडोन से प्रेम करती है। 16 मई, 1857 ई. को 43 अंग्रेजों को लालकिले के पास भीड़ मौत के घाट उतार देती है। नरगिस इस दौर में लालकिले व बागियों की खबरें अंग्रेजों तक पहुंचाती है। वह बहादुरशाह जफर की पत्नी जीनत महल की भी विश्वासपात्र है। उपन्यास में मुखबिरों का कई स्थान पर वर्णन है। अफजल खान नामक मुखबिर का जिक्र है जिसको मुगल शहजादा इसलिए कैदखाने में डलवा देता है क्योंकि वह अंग्रेजों से 2 हजार रुपये लेकर उनकी फौज के लिए कश्मीरी गेट खोलने की साजिश कर रहा होता है। इसी तरह नरगिस का अंग्रेज प्रेमी भी उसका इस्तेमाल करता है और लालकिले की दीवार की ऊंचाई नाप कर बताने को कहता है। यह करते हुए वह भी पकड़ी जाती है और जेल में डाल दी जाती है। जब अंग्रेज दिल्ली पर दोबारा कब्जा कर लेते हैं तो लड़ाई के अंतिम दौर में ला अडोन गोली लगने से बुरी तरह जख्मी हो जाता है और मारा जाता है। नरगिस इस दुख को सह नहीं पाती है और दिल्ली छोड़ कर मक्का की यात्रा पर निकल जाती है। उपन्यास के पाठ में वह प्रेम करने वाली नारी ही नहीं बल्कि साम्राज्यवादी मर्द के सामने समर्पण करने वाली ऐसी स्त्री है जो उपनिवेश की प्रतीक बन जाती है। उपन्यास की कथा में दिल्ली के तत्कालीन जीवन का विस्तृत ब्यौरा प्राप्त होता है, पर भारतीय सिपाहियों के विद्रोह का कोई ठोस चित्र उभर कर नहीं आता है यह इस कृति की ही नहीं बल्कि इस विषय पर लिखे गये अधिसंख्य अंग्रेजी उपन्यासों की सबसे बड़ी कमजोरी है।[6]

इस विषय पर लिखा गया एक अन्य उपन्यास *'सीता'* (1872), जिसे फिलिप मीडोज टायलर ने लिखा था, सम्भवतः सबसे अधिक चर्चित उपन्यास है। इसमें विद्रोह की उथलपुथल की पृष्ठभूमि में अंग्रेज पुरुष व भारतीय स्त्री के बीच प्रेम व विवाह का विषय केन्द्र के तौर पर स्थापित किया गया

है। उपन्यास में सीता एक अत्यंत सुंदर स्त्री है जिसका विवाह गोकुलपुर के समृद्ध बैंकर हरीदास के साथ हो जाता है। हरीदास के भाई रामदास के उकसावे पर एक कुख्यात डकैत अजरैल पांडे का गिरोह उसके घर पर डकैती डालता है। हमले में हरिदास मारा जाता है। सीता अपने बेटे को लेकर शाहगंज में अपने दादा के घर चली जाती है। वहां वह संस्कृत की पढ़ायी करती है, वैदिक पौराणिक ग्रंथ पढ़ती है तथा स्थानीय ब्राह्मण वामन भट्ट से इस विषय पर बहसें करती है। एक साल बाद जब अजरैल पांडे पकड़ा जाता है और डिप्टी कमिश्नर साइरिल ब्रेंडन के कोर्ट में पेशी होती है तो सीता को भी गवाही के लिए बुलाया जाता है। वहां ब्रेंडन सीता के सौन्दर्य व ज्ञान पर मुग्ध हो जाता है। सीता भी मन ही मन उसे चाहने लगती है। अजरैल की फांसी की सजा होती है, पर वह पहले ही भाग निकलता है। ब्रेंडन को गुप्त जानकारी मिलती है कि अजरैल सीता के दादा नरेन्द्रनाथ के घर धावा बोलने की तैयारी कर रहा है तो वह दलबल समेत वहां पहुंच जाता है। गोलीबारी में ब्रेंडन जख्मी हो जाता है और अजरैल फिर से भाग निकलता है। सीता अब ब्रेंडन की देखरेख करती है जिससे दोनों में प्रेम और गहरा हो जाता है। ब्रेंडन के ठीक होने के बाद सीता के जीवन में तब दुःख का पहाड़ टूट पड़ता है जब उसका इकलौता बेटा अचानक बीमारी से चल बसता है। सीता का विवाह ब्रेंडन के साथ मंदिर में हिन्दू रीति रिवाजों के मुताबिक हो जाता है और दोनों नूरपुर नामक स्थान पर बस जाते हैं। वहां सीता पूरी तरह से ब्राउन मेमसाहब में बदल दी जाती है, हालांकि वैदिक परम्परा के अनुकूल स्त्री आचरण को वह नहीं त्यागती है। पर एंग्लो इंडिया समुदाय के अन्य अंग्रेज सीता का उपहास उड़ाते हैं और उसे अपनाने से एक तरह से इनकार कर देते हैं। इस बीच तेजी से विद्रोह फैलने लगता है। अजरैल इसका प्रमुख प्रचारक बन कर उभरता हुआ दिखाया गया है। नूरपुर में भी आगजनी व लूट की कुछ घटनाएं होती हैं। नूरपुर के पास बसी दो रियासतों के मालिक राजा हरपाल सिंह तथा नवाब दिल बहादुर खान भी बगावत कर देते हैं। सशस्त्र टुकड़ी को साथ लेकर अजरैल ब्रेंडन के घर हमला करता है जिसमें ब्रेंडन को बचाने के प्रयास में सीता मारी जाती है। बाद में कैप्टन हॉबसन के हाथों अजरैल भी मारा जाता है। सीता की मौत से स्तम्भित ब्रेंडन उसकी अंतिम इच्छा पूरी करने के लिए शाहगंज स्थित उसके गांव में उसके नाम पर स्कूल स्थापित करता है। इसके उपरांत ब्रेंडन एक अंग्रेज स्त्री से विवाह कर इंग्लैण ड में बस जाता है। उपन्यास में अजरैल जैसी अंग्रेजों के विरोधी को हत्यारे से डकैत तथा कालीपूजक के रूप में प्रस्तुत करना स्वयं अंग्रेजों के भीतर के डर व पूर्वग्रह का सूचक बन जाता है। हिंसा को पसंद करने वाली काली देवी को जब सफेद बकरी की बलि दी जाती थी तो उसे औपनिवेशिकता के खिलाफ भारतीयों के प्रतिरोध के रूप में देखा जाता था। इसमें कुर्बानी व विनाश का सम्बंध एक ओर स्त्री सशक्तीकरण से जुड़ता था तो दूसरी ओर गोरों के उपनिवेशवाद के खिलाफ राजनीतिक संदेश का तत्व भी इसमें उपस्थित रहता था।[7] काली की पूजा में मौजूद शक्ति उपासना व हिंसा अंग्रेजों को भीतर ही भीतर भयभीत भी करती है। इसलिए एक ओर सीता के रूप में ऐसे वैदिक स्त्री चरित्र को उभारा गया है जो त्यागशील हिन्दू पत्नी है, साथ ही पश्चिमी संस्कृति से तालमेल कायम करने वाली नारी भी है। यहां प्राच्यविदों द्वारा खोजी गयी वैदिक संस्कृति को पश्चिमी शासन के साथ सामंजस्य व सह अस्तित्व का सम्बंध बनाने के लिए विवश कर दिया गया है। दूसरी ओर बगावत करने वाला अजरैल का चरित्र है जो डकैत है तथा सतीप्रथा का समर्थक व विधवा विवाह विरोधी है। कथानक की हल्की से डीकोडिंग से पता चल जाता है कि वैदिक आदर्शों का जो प्राच्यवादी विमर्श निर्मित हुआ था, वह अंग्रेजों के अनुकूल था। वे समस्त विद्रोहों को न सिर्फ आधुनिकता के विरुद्ध बल्कि वैदिक ज्ञान परम्परा से अनभिज्ञ लोगों के स्वार्थों का परिणाम मानते थे। खास बात यह है कि सीता उपन्यास में अंग्रेज लेखिका द्वारा भारतीय स्त्रियों के बारे में सीता, सावित्री, सती के पारम्परिक आदर्शों का उल्लेख किया गया है। इसमें अंग्रेजों की ओर से भारतीय स्त्री के अधिकारों की वकालत नहीं की गयी है, बल्कि भारतीय स्त्रियों द्वारा अंग्रेजों के भारत में बने रहने के अधिकार की वकालत की गयी है।

tadbhav.com home page

ऐसा लगता है कि खुद भारतीय स्त्रियां बढ़ चढ़ कर अंग्रेजों से अपनी गुलामी की भीख मांग रही हैं। वे अपनी आजादी को उनके चरणों में भेंट करने के लिए तैयार हैं और अपने हृदय को किसी अंग्रेज पुरुष के हाथों गिरवी रखने की प्रतीक्षा कर रही हैं। वे उनमें अपने भगवान व उपासक का चेहरा ढूंढ रही हैं। सीता उपन्यास में ही नायिका अंग्रेजों के बारे में कहती है– हम केवल आपकी पूजा करते हैं, आपको बेइंतिहा प्यार करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे अपने ईश्वर से करते हैं।[8]

उपन्यास में राजपूत राजकुमारियों से विवाह करने वाले अकबर की मिसाल देते हुए अंतरप्रज. ातीय विवाह को साम्राज्य के हित में बताया गया है। पर उपन्यास नायिका सीता के रूप रंग को अंग्रेजों के समकक्ष ही प्रस्तुत किया गया है। यानी वह अत्यधिक गोरी तथा लावण्य से भरी नायिका है जो गोरी प्रजाति के सदस्यों के मध्य आसानी से खप सकती है। इस प्रकार भारतीय स्त्रियों को तभी स्वीकृति मिलती है जब वे अपने गोरेपन के बल पर अंग्रेजों के प्रजातिवादी समुदाय में समाने की योग्यता प्रदर्शित करती हैं। पर ध्यान देने की बात यह है कि इसके बावजूद अंत में उन्हें किसी दुर्घटना या बलवा में मरवा दिया जाता है और अंग्रेज नायक फिर किसी अंग्रेज युवती से विवाह कर वापस इंग्लैण्ड में जाकर बस जाता है। साम्राज्यवादियों की जो महानता भारतीय स्त्रीत्व के सामने खंडित होती या समानता की ओर जाती दिखती है, वह फिर से स्थापित कर दी जाती है।[9]

'द अफगान नाइफ' (1879), जिसका लेखक रॉबर्ट स्टर्नडेल था, वहाबी आंदोलन व 1857 की क्रांति के अंतःसम्बंधों पर आधारित है। इसमें बिहार के सासाराम व आसपास के जीवन की कथा है। वहां एक वहाबी आंदोलन से जुड़े हाकिम शेख रहमतउल्लाह अपनी बीवी तथा पोते अब्दुल रहीम के साथ रहते हैं। वह एक अनाथ लड़की फजिल्ला का भी पालन पोषण करते हैं। जवान होने पर उसका विवाह अब्दुल के साथ तय होता है, पर रहमतउल्लाह का भतीजा और डिप्टी मजिस्ट्रेट मुंशी करीमुल्लाह भी फजिल्ला से विवाह करना चाहता है। अपने प्रस्ताव को नकारे जाने के बाद वह शेख का दुश्मन बन जाता है। इसी के समानांतर कथा यह है कि फ्लोरेन्स में पॉल स्टेनफोर्ड नामक पेण्टर जहाज यात्रा के दौरान अमनपुर में बसे अंग्रेज जज व उसकी बेटी ग्रेस से मिलता है और उससे प्रेम करने लगता है। एक भारतीय राजकुमार हैदर अली भी यात्रा के दौरान मौजूद होता है और वह भी ग्रेस से प्यार करने लगता है। वह भारत में बगावत के लिए रूसी एजेण्टों के सम्पर्क में भी है। भारत में वह अमनपुर के पास बसे असलगढ़ के किले की युवा व बहादुर रानी जो अपनी रियासत अंग्रेजों द्वारा छीने जाने से नाराज है, उससे सम्पर्क करता है। वहाबी आंदोलन से जुड़े एक हाजी साहब भी सासाराम में धर्मांतरण ा का भय दिखा कर लोगों को विद्रोह के लिए उकसाते हैं। उधर, पॉल भी इसी समय भारत पहुंचता है और ट्रेन से इलाहाबाद आता है। इस बीच मुंशी करीमउल्लाह बेनी सिंह के गिरोह से फजिल्ला का अपहरण करा लेते हैं। अब्दुल उसे बचाने की कोशिश करता है तो उसे कुएं में फेंक दिया जाता है। वह किसी तरह जान बचाता है और फजिल्ला की खोज में निकल पड़ता है। रास्ते में उसे मिर्जापुर के पास नदी में पॉल डूबता दिखता है और वह उसकी जान बचाता है। दोनों अंग्रेजों के प्रति वफादार राजा के पास चले जाते हैं। अमनपुर में विद्रोह फैलने पर कई अंग्रेज मारे जाते हैं, पर ग्रेस व उसका पिता मिस्टर लफटन बच जाते हैं। दोनों असलगढ़ में रानी के पास शरण लेते हैं। पर रानी जब मिस्टर लफटन को रखने से मना कर देती है तो हैदर अली उसे एक जमींदार के घर भेज देता है और खुद ग्रेस से विवाह की योजना बनाता है। उधर, ब्रिटिश फौजें हमला करती हैं और मिस्टर लफटन को मुक्त करा लेती हैं। दूसरी ओर असलगढ़ के किले में रानी भी बगावत कर देती है, पर किले पर अंग्रेज जल्द कब्जा कर लेते हैं। फजिल्ला व ग्रेस को आजादी मिल जाती है। हाजी साहब को नाटकीय ढंग से पता चलता है कि फजिल्ला उनकी अपनी बेटी है तो वे सासाराम पहुंच कर मुंशी करीमउल्लाह को चाकू भोंक देते हैं क्योंकि उसी ने फजिल्ला को अगवा कराया होता है। उपन्यास का शीर्षक अफगान नाइफ इसी घटना से सार्थकता ग्रहण करता है। ग्रेस व पॉल का विवाह हो जाता है। फजिल्ला सासाराम लौट

tadbhav.com home page

कर ईसाई धर्म अपना लेती है और अब्दुल को भी ऐसा ही करने के लिए समझा बुझा कर तैयार कर लेती है। सैयद हैदर अली बाद में रूस तुर्क युद्ध में मारा जाता है। उपन्यास की कथा कई शहरों जैसे फ्लोरेन्स, लंदन, कलकत्ता, पटना व सासाराम तक फैली है और घटनाबहुलता के कारण कथानक बार बार ओझल हो जाता है। पर वहाबी आंदोलनकारियों की कट्टर छवि, अंग्रेजों की वीरता व उदारता तथा अंत में उनकी विजय पूरे उपन्यास में एक विचित्र सी सुनिश्चितता के साथ सामने आती है। प्रायः सभी म्यूटिनी नॉवेल में या तो रानी झांसी व नाना साहब आदि का खुल कर नाम लिया गया है या फिर ऐसे पात्रों की रचना की गयी है जिनकी गतिविधियां तथा चरित्र उनसे मिलते जुलते हैं। इस कृति में भी सैयद हैदर अली नाना साहब के विश्वस्त सहयोगी अजीमुल्लाह खान तथा असलगढ़ की क्रूर रानी वास्तव में झांसी की रानी की प्रतीक है।[10] अंग्रेजों की सामरिक विजय से जहां उनकी स्वाभाविक प्रभुत्ववादी भूमिका सामने आती है, वहीं फजिल्ला व अब्दुल जैसे वहाबी आंदोलन के परिवार के बच्चों द्वारा ईसाई धर्म अपनाये जाने को पश्चिम की विचारधारात्मक व धार्मिक विजय के रूप में पहचाना जा सकता है। 1857 की थीम पर लिखे सभी उपन्यासों में हिन्दुस्तानी बागियों को स्त्रियों का अपहर्ता, राजद्रोही व कट्टर दिखाने की प्रवृत्ति इतनी ज्यादा है और जो इस विषय पर लिखे सभी उपन्यासों में इतनी बार दोहरायी जाती है कि बड़ी ही उबाऊ व अस्वाभाविक प्रतीत होने लगती है। इस उपन्यास में झांसी की रानी से मिलते जुलते जिस चरित्र को रचा गया है, वह दुष्ट व षड्यंत्रकारी है। उसी की वजह से हिंसा होती है और निर्दोषों की जानें जाती हैं, जबकि अंग्रेज हिंसा के बीच शांति स्थापना के लिए संघर्षरत दिखाये गये हैं। मर्दानी अंग्रेज प्रजाति का गुणगान, जो विक्टोरियाई शौर्य से प्रेरित होकर भारत में सभ्यता प्रचार के मिशन में लगी है और भारतीय स्त्रियों का सती, बाल विवाह आदि से रक्षा का प्रयास करती है, फूहड़ अतिवाद की सीमा को स्पर्श करने लगता है।

'द टचस्टोन ऑफ पेरिल' (1887) मुख्य रूप से मसूरी के पास बसे इलाके की कहानी है जहां एक ओर नील फैक्ट्री के अंग्रेज मालिक के परिवार की कहानी है तो दूसरी ओर सत्ता छिनने से क्रोधित मुस्लिम नवाब तथा हिन्दू जमींदार द्वारा ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष की तैयारियों का वर्णन है। मुस्लिम नवाब के खलनायकीकरण का तरीका पुराना है जिसके अंतर्गत उसे अंग्रेज लड़कियों पर कामुकता भरी दृष्टि डालने व उन्हें अगवा करने का इरादा पालते दिखाया गया है। डी.एच. थॉमस ने मसूरी के पास हाजीगंज स्टेशन से 5 किमी. दूर हाजीगंज नील फैक्ट्री के मालिक मिस्टर निएल की समृद्धि का वर्णन किया है जिन्होंने कब्रगाह की जमीन खरीदी थी और फिर वहां घर, खेत, बगीचे बना कर भारी दौलत जुटा ली। कथा का समय नवम्बर 1856 का है जब मिस्टर व मिसेज निएल की दो कमसिन बेटियां मैरी व चैलोई इंग्लैण्ड से वहां आती हैं। दोनों लड़कियां जीवन में नवयौवन की उमंग से भरी हुई हैं। हाजीगंज में ही वहां का डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर जॉन डाइक रहता है। उसकी पत्नी ने कलकत्ता में ऊंची सोसायटी की जिन्दगी देखी है, इसलिए वह इस अलग थलग कस्बे में अपनी बोरियत की शिकायत करती रहती है। भारत में मेमसाहब को जब साम्राज्यवादी भूमिका में ढाला गया था तब उसकी घरेलू प्रशासक (domestic administrator) वाली छवि को ही अधिक दृढ़तापूर्वक प्रतिपादित किया गया था।[11] विक्टोरियाई विचारधारा के तहत उपनिवेशों में स्त्रियों की सांस्कृतिक भूमिका को भी सीमित रखा गया था। उपनिवेशों की जीवनशैली में अकेलेपन, निष्क्रियता, बच्चों से दूरी तथा सांस्कृतिक अलगाव व पति की व्यस्तता ने उनके मानसिक संकट को बढ़ा दिया था। पर इन विषयों पर ठीक से किसी उपन्यास में विचार नहीं किया गया। 1857 की थीम पर लिखे कई उपन्यासों में इसी समस्या से ग्रस्त स्त्रियों के चरित्र तो सामने आते हैं पर उनकी समस्या को सही संदर्भ में न तो रखा जाता है और न उनके चरित्र को ठीक से उभारा जाता है। इस उपन्यास की कथा में दो अंग्रेज अफसरों को इन लड़कियों के साथ फ्लर्ट करते दिखाया गया है और अंत में उन्हीं से उनका विवाह भी होता है। दयाराम नामक हिन्दू जमींदार का चरित्र भी आता है जो लक्ष्मी प्रसाद नामक साहूकार से अपमान का बदला

लेना चाहता है। जुल्फीकार अली खान पुराना नवाब तथा दिल्ली के मुगल शासकों से सम्बंध रखता है। वह अंग्रेजों के खिलाफ बगावत भड़काने के लिए लोगों को पत्र भेजता रहता है। हाजीगंज का नवाब बगावत के दौरान मिस्टर निएल की लड़कियों को अगवा कराने की योजना भी तैयार कर रहा है। जब मई 1857 को बगावत शुरू होती है तब डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट समेत कई अंग्रेज अधिकारी मारे जाते हैं तथा नवाब हाजीगंज का शासक घोषित कर दिया जाता है। मिस्टर व मिसेज निएल, उनकी बेटियां व अन्य अफसरों की पत्नियां एक गोदाम की छत पर जाकर छिप जाते हैं। पहले नवाब की सेना और बाद में जुल्फीकार अली खान के सिपाही आते हैं। जुल्फीकार व मिस्टर निएल लड़ाई में मारे जाते हैं। दूसरी ओर दयाराम खुद को हाजीगंज का राजा घोषित करता है, पर वहां के नवाब से उसका विवाद हो जाता है। लक्ष्मीप्रसाद का घर लूट कर उसकी हत्या कर दी जाती है। कैप्टन निकोलसन बाद में अपनी सेना लेकर आता है तथा गोदाम में छिपी अंग्रेजी स्त्रियों को सुरक्षित बचा लिया जाता है। इस दौर के प्रायः सभी उपन्यास अंग्रेजों की विजय के साथ ही समाप्त होते हैं। विद्रोह की घटनाओं का प्रयोग खास तरह की सनसनी पैदा करने के लिए किया जाता है, अंग्रेजों को पहले उत्पीड़ित और फिर चरम उत्पीड़क दिखा कर उनकी विजेता छवि को और पुष्ट किया जाता है। उनके जीवन की रोमांटिक व ऐतिहासिक कथाएं समानांतर चलती हैं। रोमांटिक कथाओं में जहां वे अपनी प्रजाति के अंदरूनी संसार में सम्बंध स्थापित करते हुए दिखते हैं, प्रेम प्रसंगों में लीन अंग्रेजी जीवनशैली में डूबे नजर आते हैं, तो दूसरी ऐतिहासिक कथा में वे साम्राज्य रक्षक के रूप में प्रवेश करते हैं तथा ब्रिटेन के हितों के लिए भारतीयों को पराजित करते दिखाये जाते हैं। भारतीयों को पराजित करना भारतीयों के हितों के लिए ही जरूरी बताया जाता है क्योंकि रूडयार्ड किपलिंग के शब्दों में वे *अर्ध शैतान व अर्ध शिशु* हैं जिन्हें इस अवस्था से उबार कर सभ्यता तक लाना ही *वाइट मैन्स बर्डन* है।

'रजब, द जगलर' (1893) उपन्यास भी कानपुर में नाना साहब के नेतृत्व में हुए विद्रोह पर आधारित है। इसे जी.ए. हेंटी ने रचा था। उपन्यास के आरम्भ में बिठूर में नाना साहब द्वारा दी गयी दावत का चित्रण है जिसमें कानपुर व आसपास नियुक्त बड़े अंग्रेज अफसर बुलाये जाते हैं। कानपुर से 40 किमी. दूर दीनूगढ़ में तैनात अंग्रेज अधिकारी मिस्टर बाथरस्ट व इंग्लैण्ड से आयी युवती इसोबेल हैनवे भी दावत में सम्मिलित होती है। पर नाना साहब के व्यवहार से वह युवती काफी खिन्न दिखायी जाती है। उपन्यास में खेल तमाशे दिखा कर लोगों का मनोरंजन करने वाला चरित्र रजब भी है जिसकी बेटी रबदा को मिस्टर बाथरस्ट शेर के हमले से बचाते हैं और इस कारण वह उनका ऋणी हो जाता है। उपन्यास का बड़ा हिस्सा अंग्रेज युवती इसोबेल, अफसर बाथरस्ट व फौजी अधिकारी कैप्टन फोर्सटर के प्रेम त्रिकोण पर आधारित है। अंग्रेज पाठकों को सस्ता मनोरंजन देने के लिए 1857 पर केन्द्रित उपन्यासों में प्रेम, सेक्स, धोखा आदि के फॉर्मूलों का व्यापक प्रयोग किया गया है। मेरठ में विद्रोह होने की खबर को पहले ही रजब बाथरस्ट तक पहुंचा देता है। सारे अंग्रेज कानपुर में भी सुरक्षित स्थलों पर पहुंचा दिये जाते हैं, पर नाना साहब की फौजें उनके चारों ओर घेरा डाल देती हैं। बाथरस्ट को बहादुरी से लड़ते दिखाया जाता है और अंग्रेज युवती इसोबेल उसकी इस बहादुरी पर मुग्ध हो जाती है। रजब इस दौरान बाथरस्ट को नाना साहब की युद्ध सम्बंधी रणनीतियों, व्यूह रचना व इरादों के बारे में सूचनाएं पहुंचाता रहता है। इस थीम के उपन्यासों में विद्रोह से अलग रह कर अंग्रेजों के लिए मुखबिरी करने, उनकी मदद करने व उनसे प्रेम करने वाले भारतीय स्त्री पुरुषों के चरित्र को विशेष महत्व प्रदान किया गया है। प्रायः उनकी वफादारी को ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सबसे महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है। उनके चरित्र के बारे में प्रशंसा, कृतज्ञता व सहजता का भाव है, जबकि विद्रोहियों के चरित्र को या तो अंग्रेज लेखकों ने मानवीयता से वंचित दिखाया है या फिर ऐसी पराजित कौम के सदस्य के रूप में जिसकी बगावतें हर बार ब्रिटिश ताकतों द्वारा निरर्थक बना दी जाती हैं। सती चौरा घाट, जहां गंगा नदी में बोट से जा रहे करीब 60 अंग्रेज स्त्री पुरुषों की हत्या कर

दी गयी थी, उसका भी सनसनीखेज वर्णन उपन्यास में मौजूद है। इस घटना में बाथरस्ट किसी प्रकार नाव से कूद कर अपनी जान बचाता है और किसी प्रकार किनारे पहुंच जाता है। अंग्रेज औरतों को नाना साहब एक कोठी में बंद करा देते हैं। इसोबेल भी नाना के जनाने में कैद करके रखी जाती है। बाथरेस्ट रजब व उसकी बेटी रबदा की मदद से किसी प्रकार इसोबेल तक एसिड पहुंचा देता है। उस एसिड को वह चेहरे पर उड़ेल कर चेहरा जख्मी कर लेती है। नाना साहब को लगता है कि वह किसी छूत के रोग की शिकार हो गयी है, इसलिए उसे दूसरी जगह सबसे अलग कैद कर लेते हैं। इसके बाद जल्द ही कानपुर में नाना साहब पराजित हो जाते हैं। बाथरस्ट लखनऊ में लड़ाई के बाद इग्लैण्ड चला जाता है और इसोबेल से उसका विवाह हो जाता है। उपन्यासों के सुखांत का यह चिरपरिचित तरीका कई लेखकों ने अपनाया है जिसमें ब्रिटिश हीरो बहादुरी व चतुराई से 1857 के विद्रोहियों का दमन करता है और फिर मनचाही प्रेमिका को प्राप्त कर उससे विवाह कर लेता है। अंग्रेज प्रेमिकाएं लड़ाई के दौरान अपनी दैहिक पवित्रता को बचाये रखती हैं, जिससे कि बाद में ब्रिटिश राष्ट्रवाद के लिए समर्पित वीर अंग्रेज मर्द के हाथों देह को उसके समूचे कौमार्य व अक्षत रूप में सौंपा जा सके। गोरी स्त्रियों की सेक्सुअलिटी को हर प्रकार से नियंत्रित तथा मर्यादित रखने के प्रसंगों से प्रायः ऐसे उपन्यास भरे पड़े हैं। इस उपन्यास में नाना साहब को लुटेरे, कामुक व विश्वासघाती के रूप में प्रस्तुत किया गया है और उनके दुश्चरित्रता के चित्रण को विश्वसनीयता प्रदान करने के लिए उन्हें अंग्रेज औरतों का दीवाना व बलात्कारी दिखाया गया है। यहां विद्रोह के तात्विक कारणों का विवेचन करने के स्थान पर विद्रोहियों की चरित्र हत्या को थीमेटिक विशेषता बना दिया जाता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि लड़ाई खत्म होने के बाद अंग्रेजों की सख्त छानबीन के बावजूद इसके पुख्ता प्रमाण नहीं मिले थे कि विद्रोहियों ने अंग्रेज औरतों की इज्जत लूटी, उनके साथ बलात्कार किया। ऐसे साक्ष्य ढूंढे ही इसलिए जा रहे थे ताकि अंग्रेजों की बर्बरता को सही ठहराया जा सके।[12]

साक्ष्य ढूंढने की असफलता को लंदन के अंग्रेजी समाचारपत्रों तथा आला अधिकारियों ने भी स्वीकार किया था। इसके बावजूद 1857 पर केन्द्रित अंग्रेजों के उपन्यासों में बार बार दोहराया जाता रहा कि भारतीयों ने अंग्रेज महिलाओं पर कुदृष्टि डाली, उनसे विवाह रचाने व बलात्कार की कोशिश की और अंग्रेज स्त्रियों ने बहादुरी से अपना बचाव किया। जो दावे पूरी तरह अनैतिहासिक व भड़काऊ अफवाह की तरह थे, वे फिक्शन में किसी वास्तविकता की तरह पेश किये जाते रहे। 1857 के इतर भी ऐतिहासिक घटनाओं पर जो उपन्यास लिखे गये, उनमें भी भारतीय नायकों को खासकर कामुक व व्यभिचारी दिखाया गया है। टीपू सुल्तान जैसा चरित्र भी इस प्रहार से बच नहीं सका। 1827 में सर वॉलटर स्कॉट ने *'ए सर्जन्स डॉटर'* नामक उपन्यास लिखा था जिसमें टीपू द्वारा ब्रिटिश महिलाओं पर बुरी निगाह रखने का जिक्र आता है। उपन्यास में एक सर्जन की लड़की को फुसलाने का जिम्मा टीपू एक अंग्रेज पर सौंपता है, पर ऐन वक्त पर उसे अन्य अंग्रेज युवक द्वारा बचा लिया जाता है। फिक्शन किस प्रकार इतिहास से ही ताकत व सामग्री लेकर उसी इतिहास को विकृत करत है, ये सभी इसका उदाहरण हैं। मजे की बात यह है कि अंग्रेजों ने भारतीय स्त्रियों से अपने विवाह के किस्सों व अनुभवों का जी भर कर वर्णन किया है और इन विवाहों को अपने करुण व उदार स्वभाव के प्रतीक की तरह प्रस्तुत किया है। पर भारतीयों से अंग्रेज स्त्रियों के सम्बंधों के बारे में प्रजातीय असहिष्णुता खुल कर सामने आ जाती है। इन सम्बंधों के बारे में औपन्यासिक कथाएं सुनियोजित मौन धारण किये हुए हैं। कई बार तो इन सम्बंधों की सम्भावना को भी नकारने व इनकी अनैतिकता को दिखाने के लिए भारतीयों को यूरोपीय स्त्रियों पर कामातुर निगाह रखने का दोषी ठहरा दिया जाता था। उपन्यासों में अंग्रेज अफसर प्रायः मेहनती, सच्चे दिल वाले प्रेमी, विश्वासपात्र भारतीयों के मददगार तथा स्त्री रक्षक बनते रहे, जबकि विद्रोहियों के महान नेता भी निकृष्ट चरित्र व आचरणों के रूपक की तरह प्रस्तुत किये जाते रहे। इस दौर के उपन्यासों में सबसे अधिक खलनायकीकरण अगर किसी का हुआ है तो वह है

tadbhav.com home page

नाना साहब का चरित्र। इसके सम्भवतः दो कारण हैं। पहला यह कि वहां सती चौरा कांड हुआ था जिसने अंग्रेजों को स्तम्भित कर दिया था और अपने टूटे मनोबल के सहेजने के लिए पूरे अवध प्रांत में उन्होंने क्रूरता की सारी सीमाएं लांघ दी थीं। दूसरा यह कि लखनऊ व झांसी के केन्द्रों को सबसे अधिक सामरिक व राजनीतिक मदद लम्बे समय तक कानपुर से ही प्राप्त होती थी। नाना साहब के सेनापति तात्या टोपे ने झांसी व ग्वालियर में सेनाओं को नेतृत्व प्रदान किया था। आमने सामने की लड़ाई में ब्रिटिश सेनाओं को वहीं पर सबसे बड़ी पराजय का सामना करना पड़ा था। इसके अतिरिक्त कानपुर फौजी छावनी, व्यापार व रसद के मामले में उस समय काफी बड़ा केन्द्र था।

नाना साहब के अतिरिक्त रानी लक्ष्मीबाई के चित्रण को भी ब्रिटिश इतिहास दृष्टि के अनुकूल कई प्रकार से कांट छांट कर, अनैतिहासिक वाक्यों से सजा कर व चारित्रिक पतन के कारनामों से भर कर प्रस्तुत किया गया। कुछ उपन्यास ऐसे हैं जिसमें रानी को अत्यधिक कामुक, धोखेबाज व लालची स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसमें अंग्रेज अधिकारी गेलेन का *द रानीः ' ए लीजेण्ड ऑफ इंडियन म्यूटिनी* (1887) तथा ह्यूम निस्बत का *द क्वीन्स डिजायर* (1893) प्रमुख थे। पहले उपन्यास में रानी को अंग्रेजों के उत्पीड़न का आनंद लेने वाली तथा अपने स्वार्थ के लिए अंग्रेज अधिकारियों के साथ यौन सम्बंध बनाने वाली स्त्री के रूप में पेश किया गया है। वह बहादुर स्त्री के स्थान पर कायर चरित्र है जो धोखे से जहर देकर अंग्रेज अफसरों को मारने का प्रयास करती है। दूसरे उपन्यास में भी वह कामोत्तेजक व दुश्चरित्र स्त्री के रूप में दिखायी गयी है जो निम्न वर्ग के अंग्रेज युवक के साथ सम्बंध रखती है।[13] आजादी के बाद लिखे गये उपन्यासों का हालांकि संदर्भ बदल गया था, पहले की तरह सभ्य अंग्रेज व असभ्य नेटिव के विभाजन के फ्रेमवर्क में राजनीतिक घटनाओं को प्रस्तुत करना अनिवार्य नहीं रह गया था। अंग्रेजों की कमजोरी व नीचता दिखाने वाले उपन्यासों की रचना भी होने लगी थी, फिर भी ऐसी कृतियां सामने आयीं जिनमें 1857 से ब्रिटिश साम्राज्य के पुराने जुड़ाव को कई राजनीतिक पूर्वग्रहों के साथ याद किया गया। आजादी के पश्चात जॉन मास्टर का उपन्यास *नाइट रनर्स ऑफ बंगाल* (1951) प्रकाशित हुआ था जिसमें रानी लक्ष्मीबाई को तरह तरह की धूर्तताओं में लिप्त दिखाया गया है, जबकि अंग्रेजों को युद्ध में सभी नियम कायदों व ईमानदारी का पालन करते प्रस्तुत किया गया है। लक्ष्मीबाई के चरित्र के प्रतीक के तौर पर काशीपुर की रानी सुमित्रा का चित्रण है जो अपने ही पति का धोखे से वध करा देती है क्योंकि वह अंग्रेजों के खिलाफ खुले तौर साजिश करने की योजना में शामिल होने से इनकार कर देता है। बाद में जंगल में शिकार के बहाने रानी पड़ोसी राजाओं व अंग्रेज अफसरों को बुलाती है ताकि राजा की हत्या के बाद रानी अपने पुत्र को राज्य का उत्तराधिकारी घोषित करा सके। महल की राजनीति, अंग्रेज अफसरों की बहादुरी व प्रेम प्रसंगों की नाटकीयता के मध्य आखिर अंग्रेजों की विजय होती है और रानी सुमित्रा नदी में कूद कर अपने प्राण ा दे देती है।[14]

इस प्रकार नाना साहब हों अथवा रानी लक्ष्मीबाई औपन्यासिक कथानकों में उनके चरित्र का ऐसा अतार्किक, अनैतिहासिक व पूरी तरह औपनिवेशिक पूर्वग्रहों पर आधारित चित्रण मुख्य रूप से तीन कारणों से प्रेरित था। पहला, इसके माध्यम से इस दावे को अस्वीकार किया जा सकता था कि पराक्रम प्रदर्शन के मामले में अंग्रेजों व भारतीयों के बीच समानता है और दोनों ही पक्ष बहादुरी से लड़े भले ही जीत किसी की भी हुई हो। यानी अधीन लोगों की वीरता के गुणों को छिपाने के लिए उनकी नैतिक निर्बलताओं को सामने लाने का प्रयत्न किया गया जिससे उनका अंग्रेजों की तुलना में बहादुरी का दावा कमजोर हो जाये। दूसरा, 1857 के बारे में अंग्रेज जिस दृष्टिकोण का प्रचार कर रहे थे, उसमें विद्रोहियों के चरित्र के बारे में ऐसी नकारात्मक धारणाओं का निर्माण तथा दुष्प्रचार खास सहायता करता था। यानी विद्रोहियों के इरादों व चरित्र के बारे में संदेह जगा कर पूरे विद्रोह को न्याय व नैतिकता की कसौटी पर गलत ठहराना आसान हो जाता था। तीसरा, अंग्रेजी राज की आत्मछवि

tadbhav.com home page

का प्रश्न था जो विरोधियों की छवि को धुंधला किये बगैर अपनी सत्यता व श्रेष्ठता के बारे में लम्बे समय तक आश्वस्त नहीं रह सकती थी। इसीलिए कई उपन्यासों में विद्रोहियों की देशभक्ति, प्रजा प्रेम तथा वीरता की निन्दा के समानांतर अंग्रेजों की पितृतुल्य छवि को गढ़ने का जी जान से प्रयास किया गया है।

ऑन द फेस ऑफ द वॉटर (1896) नामक उपन्यास भी एक दौर में काफी चर्चित हुआ था, हालांकि भारत से अंग्रेजों की वापसी के बाद यह गुमनामी में चला गया। इसे लखनऊ व दिल्ली के विद्रोह को केन्द्र बना कर फ्लोरा एनी स्टील नामक अंग्रेज महिला ने लिखा था। इसमें घटनाओं व चरित्रों की ऐतिहासिक सत्यता पर अधिक ध्यान रखा गया है। उपन्यास की भूमिका में ही लेखक ने स्पष्ट कर दिया है– मैंने तथ्यों तथा कथाओं के बीच किन्चित भी घालमेल नहीं किया है। घटनाएं, तिथियां तथा मौसम सम्बंधी वर्णन, जिनका सम्बंध म्यूटिनी से है, वे भी पूरी तरह सत्यता पर आधारित हैं। 1857 से सम्बंधित विवरणों को एकत्र करने के लिए लेखिका ने पुरानी दिल्ली की गलियों में यात्राएं की, मुगल वंशजों से मुलाकातें कीं और सरकार की इजाजत लेकर गोपनीय दस्तावेजों का अध्ययन किया। उसने बताया है कि कम से कम 350 विधवाएं ऐसी भी उस समय रह रही थीं जो मुगल खानदान से अपना सम्बंध बताती थीं। और 5-10 रुपये पेन्शन उन्हें मिल रही थी। इस तरह भयंकर गरीबी में उनके दिन गुजर रहे थे।[15] कथानक के स्तर पर यह उपन्यास भी अंग्रेज स्त्री पुरुष के प्रेम प्रसंगों की जमीन पर चलता है, साथ ही दिल्ली पर मेरठ से आये बागी सिपाहियों के कब्जे, बहादुरशाह जफर की हालत व अंग्रेजों की विजय के इर्दगिर्द कथानक को बुनता है। इसमें एक हैं मेजर अर्लटन जो अपनी पत्नी केट को छोड़ अब दूसरे अफसर की पत्नी मिसेज एलिस गीसिंग के प्रेम में पागल हैं। फौज से अनुशासनात्मक कारणों से निकाला गया अधिकारी जेम्स ग्रेममैन एक मुस्लिम युवती जोरा के साथ दिन बिता रहा है। जोरा जब बीमारी से मर जाती है तो वह जिम डगलस के नाम से जासूसी करने लगता है और बंजारों व अन्य घुमंतू जनजातियों के बीच भेष बदल कर रहने लगता है। शुरुआती कथा में लखनऊ का जिक्र है, पर वह जल्द ही दिल्ली के परिदृश्य की ओर स्थानांतरित कर दी जाती है। यहां बहादुरशाह एक ओर शायरी तो दूसरी ओर साजिशों में लिप्त दिखाया गया है। बेगम जीनत महल अपने बेटे जीवन बख्त को उत्तराधिकारी बनाना चाहती है जबकि शहजादा अबू बकर शराबखोरी व विलास में डूबा हुआ है। मेजर अर्लटन का भी लखनऊ से दिल्ली तबादला होता है और वह मेरठ के दौरे पर आने के दौरान पत्नी को खत लिख कर बताता है कि अब वह मिसेज गीसिंग से विवाह करना चाहता है। मिसेज गीसिंग का पति बिजनेसमैन है और प्रायः भारत से बाहर रहता है। 10 मई 1857 को नये कारतूसों के इस्तेमाल से इनकार करने पर मेरठ में 85 सिपाहियों को जंजीरों से बांध दिया जाता है और उन्हें कई तरह की यातनाएं दी जाती हैं। मेरठ की एक वेश्या नरगीजा दूसरी वेश्याओं से अपील करती है कि वे सिपाहियों से जिस्म का सौदा न करें क्योंकि अपनी बुजदिली के कारण वे अपने भाइयों को मुक्ति नहीं दिला सकते हैं। इसके बाद सिपाही जेल पर हमला कर साथियों को आजाद करा लेते हैं। कर्नल फीनिस को परेड ग्राउंड में मार दिया जाता है और सिपाही दिल्ली की ओर कूच कर जाते हैं। अगले दिन पूरी दिल्ली में बगावत हो जाती है। बहादुरशाह जफर को इसका नेतृत्व ग्रहण करने के लिए सिपाही बाध्य कर देते हैं। कथा में मेजर अर्लटन के परिवार की अंतःकथा भी सामानांतर चलती रहती है। अर्लटन भाग कर मेरठ से दिल्ली आ जाता है। उसकी पत्नी केट वहां मिसेज गीसिंग से मिल कर अपने पति से सम्बंध न रखने की याचना करती है जिसे गीसिंग ठुकरा देती है। इसी दौरान एक मुस्लिम फकीर उनके घर में घुस आता है और पड़ोसी के बच्चे पर कटार से हमला करता है। बच्चे को बचाने की कोशिश में गीसिंग मारी जाती है। जिम डगलस भी वहां आता है और केट को लेकर तारा देवी नामक महिला के पास ले जाता है जिसे उसने पति की चिता पर जबरन सती किये जाने से बचाया होता है। तारा उन्हें अपने घर की छत पर छिपा लेती

tadbhav.com home page

है। जिम अपनी जान बचाने के लिए भेष बदल कर अफगानी बन जाता है और केट को बेगम बना देता है। उपन्यास का वह हिस्सा जिसका सम्बंध दिल्ली की बगावत से है, काफी ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। इसमें दिखाया गया है कि किस तरह बहादुरशाह सिपाहियों को तनख्वाहें न देने के कारण ा परेशान है और सिपाही लालकिले को को घेर कर शोर मचा रहे हैं। हिन्दुस्तानी फौज के सेनापति पद के लिए होड़ है और चार लोगों को मजबूरन एक साथ कमांडर इन चीफ बना दिया गया है। केट जिस महिला के घर की छत पर छिपी होती है, वहां कई बार उसकी जान जाते जाते बचती है। एक बार तो शहजादा अबुल बकर ही वहां आ जाता है और वह किसी प्रकार जान बचाती है। तारा बाद में उसे मंदिर ले जाकर उसके बाल कटाती है और अपने भाई की मदद से किसी प्रकार उसे रिज पहुंचा देती है, जहां पर मेजर अर्लटन अंग्रेज फौजों के साथ मोर्चा सम्भाले हुए है। वहां एक गोली अचानक आकर अर्लटन को लगती है जिससे वह मारा जाता है। मेजर निकोलसन उसे श्रद्धांजलि देता है और केट को बताता है कि अर्लटन का नाम बहादुरी के सर्वोच्च पुरस्कार के लिए नामित किया गया है। अंग्रेज फौजें निकोलसन की अगुवाई में दिल्ली पर नियंत्रण कायम कर लेती हैं, हालांकि वह खुद भी बुरी तरह घायल हो जाता है और मारा जाता है। मेजर हॉडसन सभी शहजादों को फांसी पर लटका देता है। बहादुरशाह व उसकी बेगम को कैद कर लिया जाता है। दूसरे उपन्यासों की भांति इसकी भी सबसे बड़ी कमजोरी यही है कि इसमें भारतीय चरित्रों को अत्यधिक संकीर्ण, रहस्यपूर्ण तथा नकारात्मक रूप से प्रस्तुत किया गया है। तारा जैसे चरित्र को सती होने से बचाने के लिए अंग्रेजों का इस प्रकार अहसानमंद दिखाया गया है जैसा पूरे भारत की स्त्रियां अंग्रेजों के प्रति कृतज्ञ होने के कारण उन्हें शासनादेश प्रदान कर रही हैं और उनकी मुखबरी करने के धर्म का निर्वाह करने के लिए तत्पर हैं। दूसरी कमजोरी यह भी है कि वे भारतीय पक्ष को पूरी तरह अनदेखा कर जाते हैं। खासतौर पर उन पर हुए उन्मादपूर्ण नरसंहार की कहीं हमें झलक तक नहीं मिलती है। बागियों को सजाएं देने वाली अंग्रेजी फौजें कैसे दिल्ली की सड़कों पर लाशें बिछा रही थीं, मकान ढहाये व लूटे जा रहे थे, तोप के गोलों से हर नौजवान को उड़ाया जा रहा था, ये सच्चाइयां जताने में ये उपन्यास इसलिए चूक जाते हैं क्योंकि इनसे साम्राज्यवाद का असली चेहरा नंगा होने का खतरा रहता है। उपन्यास में नायक व उसके साथी जीत प्राप्त कर वीरता के तमगे प्राप्त करते हैं और इंग्लैण्ड वापस जाकर शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करने लगते हैं। तीसरी कमजोरी यह है कि विद्रोह को सिर्फ चंद सामंतों की प्रतिशोधपूर्ण व विश्वासघात से भरी कार्रवाई के रूप में देखा जाता है। यह पूर्वग्रह अंग्रेज लेखकों के दिमाग में कूट कूट कर भरा था जबकि इस विद्रोह के कारणों का 1970 में अध्ययन कर रहे अंग्रेज इतिहासकार एरिक स्टोक्स की मानें तो वास्तविक अर्थों में यह विद्रोह अपने विदेशी स्वामियों के बंधन से छूटी कृषक सेना का विद्रोह था। ग्रामीण कृषक अपने विद्रोह को व्यापक आधार प्रदान करना चाहते थे और उस स्थिति में नेतृत्व जमींदार व वंश प्रमुखों के हाथ में चला गया।[16] इसी प्रकार रुद्रांशु मुखर्जी ने शोध करके बताया है कि 1857 के विद्रोह में अवध की तीन चौथाई जनता शामिल थी, और इतनी बड़ी संख्या में लोगों को आंदोलित करना सिर्फ सामंतों के बलबूते तो कदापि नहीं था।

मरियम (1896) उपन्यास पश्चिमी उत्तर प्रदेश के शाहजहांपुर की घटनाओं पर आधारित है। इसे जे.ए. फैनथोर्न ने लिखा था। चार खंडों में बंटे इस उपन्यास का आरम्भ मेरठ में 10 मई 1857 को बगावत के आरम्भ के साथ होता है। मिसेज मैरी लैवेटर, जो मरियम के नाम से जानी जाती हैं, उन्हें आने वाले बुरे दिनों का आभास हो जाता है। वह 31 मई के दिन शाहजहांपुर में अपने पति को चर्च जाने से रोकना चाहती हैं। उसके पति मिस्टर लैवेटर मजिस्ट्रेट दफ्तर में क्लर्क हैं और बीवी की मनाही के बावजूद चर्च जाते हैं। बगावत भड़कने के कारण रास्ते में ही उनके समेत कई अंग्रेज अधिकारी मारे जाते हैं। मिस्टर लैवेटर का घर भी जला दिया जाता है। मिसेज लैवेटर एक अंग्रेजी में लिखने वाले हिन्दुस्तानी लेखक लाला राजी लाल के घर शरण लेती हैं। उनके साथ उसकी बेटी व कुछ

सगे सम्बंधी भी वहीं छिप जाते हैं। उधर, पूरे शहर में रक्तपात, लूट का वातावरण कायम हो जाता है। कादिर अली खान को शहर का नवाब घोषित कर दिया जाता है। शहर के पास स्थित रोसा वाइन फैक्ट्री भी लूट ली जाती है और मुहम्मदी नामक स्थान के नजदीक करीब 40 अंग्रेज पुरुषों, बच्चों तथा स्त्रियों का कत्ल कर दिया जाता है। लाला के घर छिप कर रह रही मिसेज लैवेटर व उसकी बेटी तथा सगे सम्बंधी भारतीय नाम व वेशभूषा को अपना लेते हैं। इसी दौरान नवाबों के घर में कलह होती है और बरेली के शासक खान बहादुर खान को नजराने भेंट कर गुलाम कादिर खान गद्दी पर कादिर अली खान के स्थान पर बैठ जाता है। 27 जून को जब लाला घर पर नहीं होता है, तब मंगल खान नामक बागी कुछ साथियों के साथ घर पर हमला कर देता है। वह सभी को बंधक बना कर अपने घर ले जाता है। इसके बाद वह मरियम की बेटी से शादी करने का इरादा जाहिर करता है, पर मरियम मंगल से कहती है कि दिल्ली की लड़ाई का फैसला होने पर ही यह मुमकिन हो सकेगा। 1857 पर बनी हिन्दी फिल्म जुनून, जिसमें शशि कपूर, जेनिफर व नफीसा अली ने भूमिका निभायी थी, इसी प्रकार की कहानी पर आधारित थी। मंगल की कोठी में मरियम सभी औरतों से काफी अच्छी तरह बना कर रखती है। आकस्मिक संकट में नजदीक आयीं भिन्न राष्ट्रीयता व प्रजाति की स्त्रियां इसका अनुभव करती हैं कि उनके पास एक दूसरे को समझने, सहयोग करने व साहचर्य के लिए कितना कुछ है। दिल्ली पर चार महीने बाद सितम्बर 1857 में जब अंग्रेजों का फिर कब्जा हो जाता है तब मरियम अपने भाई को पत्र लिख कर बुला लेती है। शाहजहांपुर में भी फिर अंग्रेजों का राज स्थापित हो जाता है। इसके सामनांतर ही फरहत नामक युवक व जीनत की प्रेमकथा भी चलती है। फरहत से मिलने के लिए जीनत घर से निकलती है, पर नदी पार करते समय वह जिन्न के काबू में आ जाती है। वह जिन्न की इच्छाओं के आगे झुकने से मना कर देती है और अंत में एक फकीर के आशीर्वाद से खम्भे से फिर प्रकट होती है और फरहत से उसकी शादी हो जाती है।[17]

यह उपन्यास कई नाटकीयताओं से भरा है और खासकर फरहत व जीनत वाली घटना तो विशुद्ध मनोरंजन के लिए डाली गयी है। उपन्यास तब लिखा गया था जब विद्रोह के करीब 38 साल बीत चुके थे और जो आरम्भिक कटु स्मृतियां थीं, वे भी अब संयत होने लगी थी। इसका प्रभाव उपन्यासों पर भी दिखने लगता है। जिस प्रकार मरियम में मुस्लिम परिवार की स्त्रियों व उनके जीवन का लगावपूर्ण वर्णन किया गया है, जान बचाने के मामले में भारतीयों के दयापूर्ण स्वभाव को उभारा गया है, वह इस उपन्यास को प्रजातीय घृणा व तिरस्कार से भरे आरम्भिक दौर के अन्य उपन्यासों से अलग करता है। उपन्यास में लाला रामजी लाल या मंगल की कोठी की स्त्रियां ये सभी चरित्र विशेष महत्व प्राप्त करते हैं। अपने इन चरित्रों के वर्णन में खुद लेखक ने लिखा है कि – मरियम की कठिन स्थितियों ने हिन्दू व मुस्लिम दोनों चरित्रों के सबसे खूबसूरत व कोमल पक्षों को उभार कर रख दिया है। अगर मेरी यह किताब यूरोपियंस को दोनों प्रजातियों के भाईचारे को समझने, अंग्रेजों को नैतिकता की नकली ऊंचाइयों व सामाजिक गर्व से मुक्त होने में सहायता करे और जिन्हें वे निगर कहते हैं उनके प्रति अधिक करुणापूर्ण व संयमित बर्ताव करने की प्रेरणा दे तो मैं समझूंगी कि मेरी मेहनत सफल हो गयी।[18]

उपन्यासों का प्रसार और एम्पायर बॉय

इन उपन्यासों के लेखक भारतीय चरित्रों को भी अपनी सहानुभूति तो प्रदान करते हैं, पर यह सहानुभूति तभी तक सम्भव होती है जब तक कोई भारतीय ब्रिटिश शासन के सामने प्रश्न नहीं खड़ा करता है। इसी कारण मरियम जैसे उपन्यास में भी विद्रोही पराधीनता के खिलाफ लड़ रहे वीर योद्धा नहीं बल्कि कट्टर व क्रूर सामंत हैं और उनकी विद्रोह सम्बंधी चेष्टाएं औपन्यासिक कथाओं में भी मानवीय चरित्र

चित्रण के अयोग्य ठहरा दी जाती हैं। इस प्रकार जो सजा अंग्रेजों ने उन्हें तोप से उड़ा कर, फांसी पर लटका कर दी थी, उन्हीं सजाओं का विस्तार एंग्लो इंडियन लेखकों के उपन्यासों तक दिखायी देता है जहां उन्हें न सिर्फ मरते व पराजित होते बल्कि पूरी तरह से मानवीय संवेदनाओं व सामाजिक दायित्वों से वंचित दिखाया गया है। इस प्रकार अंग्रेजी राज के अंग्रेजी लेखकों के माध्यम से फिक्शन के स्तर पर विद्रोहियों को इस प्रकार दंडित किया जाना निरंतर कई वर्षों तक जारी रहा। ये कहानियां उन लोगों ने लिखी थीं जिन्होंने अपने को शासन करने वाली कौम समझा था और इसी वजह से गुलाम उनकी कहानियों में नायक नहीं हो सकते थे, वे सिर्फ खलनायक बनने के लिए अभिशप्त थे। इन उपन्यासों ने 1857 के बारे में अंग्रेजों द्वारा अपने व्यापारिक तथा राजनीतिक हितों के लिए गढ़े गये लोकप्रिय इतिहास का ही प्रचार किया और लोकप्रियता के लोभ में इन उपन्यासों ने उसी दृष्टिकोण को अपनाया जो दृष्टिकोण इन उपन्यासों के पाठकों का हो सकता था। उपनिवेशों में अंग्रेजी समाज व सभ्यता अच्छी तरह फलफूल रही थी, सब कुछ ठीक चल रहा था पर अकस्मात कुछ विद्रोहियों के उत्पात के कारण वे संकटग्रस्त हो गये और फिर उन्होंने मध्यकालीन शौर्य को जगा कर संकट पर काबू पा लिया। ठीक इसी लाइन पर सनसनीखेज रचनाएं एक एक कर सामने आती रहीं। रोमांस व बहादुरी की थीम पर केन्द्रित इन उपन्यासों को सेंसशनल नॉवेल का दर्जा भी दिया गया है। 19वीं सदी में अगर एक ओर अंग्रेजी में चार्ल्स डिकेन्स व रूसी में टालस्टाय जैसे गम्भीर लेखक लिख रहे थे तो उसी के समानांतर रोमांच व सनसनी पर टिके लोकप्रिय उपन्यासों का भी बड़े पैमाने पर लेखन व प्रकाशन हो रहा था। इन उपन्यासों के लेखन में ऐसी अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी में सस्ते अखबारों के चलन, मैग्जीनों के प्रकाशन, पुस्तकालयों की स्थापना व रेलवे स्टेशनों के बुक स्टॉल की बड़ी भूमिका थी।[19]

उसी दौर में बड़े पैमाने पर भारत में अंग्रेज लेखक शुद्ध विवाहेतर व प्रेमप्रसंगों के विषय पर भी उपन्यास लिख रहे थे जिन्हें मोटे तौर पर स्टेशन रोमांस के उपन्यासों के नाम से पुकारा जाता है। इनकी कथाएं प्रायः पहाड़ों के जीवन में अंग्रेज स्त्री पुरुषों के बीच पनपने वाले प्रेमप्रसंगों पर आधारित हैं। उल्लेखनीय है कि शिमला जैसे पहाड़ी स्टेशनों पर अंग्रेज मेमसाहब गर्मियों में जाती थीं और इन स्टेशनों को रोमांस व फ्लर्ट के बड़े केन्द्रों के रूप में देखा जाता था। एक दूसरे की पत्नियों को आकृष्ट करना यहां आम बात थी, पर यौन स्वच्छंदता के पीछे मुख्य रूप से स्त्री अनैतिकता को जिम्मेदार माना जाता था। इसीलिए ओवरसेक्स्ड वूमेनहुड की नयी धारणा इस समय के प्रेस व अखबारों में दिखायी पड़ जाती है। स्टेशन रोमांस के इन उपन्यासों में एक ओर मनोरंजन है तो दूसरी ओर भारत आकर रहने वाली गोरी स्त्रियों की लैंगिकता के सही मैनेजमेण्ट और उन्हें आदर्श मेमसाहब बनाने की चिन्ता भी उपस्थित है। इंद्राणी सेन ने बताया है कि 1857 के बाद बड़े पैमाने पर अंग्रेज स्त्रियां भारत आने लगीं और वे अंग्रेजी सभ्यता की औपनिवेशिक पहचान की प्रतीक में ढाल दी गयीं। ऐसी महिलाओं के पास भारत में खाली वक्त अधिक था, जहाज व रेल की लम्बी यात्राएं उन्हें करनी पड़ती थीं। इसलिए उनकी पाठकीय आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर प्रेम व सेक्स से जुड़ी हल्की फुल्की रचनाएं लिखी गयीं।[20] स्टेशन रोमांस के अतिरिक्त विद्रोह पर आधारित उपन्यासों में भी पाठकों की इन आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया तथा उनमें रोमांचक प्रेमकथाओं व पारिवारिक दुनिया का पूरा संसार रचा गया जो हिंसक विद्रोह के कारण तात्कालिक रूप से खंडित तथा छिन्न भिन्न होता है, पर अंग्रेज नायकों की वीरता के प्रदर्शन के बाद इस आश्वासन के साथ समाप्त होता है कि गोरों की यूरोपीय संस्कृति निरापद है और सब कुछ पूर्ववत चलता रहेगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जिन्हें आज हम म्यूटिनी नॉवेल के नाम से जानते हैं, वे कई प्रकार के राष्ट्रीय, कारोबारी व साम्राज्यवादी दबावों के कारण लिखे गये। हाल ही में इस ओर भी ध्यान आकृष्ट किया गया है कि किस प्रकार ये उपन्यास इंग्लैण्ड के बदलते अंदरूनी हालातों व राजनीति से बुरी तरह प्रभावित थे। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में इंग्लैण्ड की अर्थव्यवस्था लड़खड़ाने लगी थी। कई

tadbhav.com home page

सुधार व चुनाव सम्बंधी कानूनों के कारण वहां वास्तविक लोकतंत्र का विकास हो रहा था। ट्रेड यूनियन कानून भी अस्तित्व में आ रहे थे और अहस्तक्षेप की नीति (लेजे स्फीयर) की जगह राज्य के हस्तक्षेप की नीति को अंगीकार करने के लिए दबाव बढ़ता जा रहा था। 1857 से 1884 के बीच फसलों की बर्बादी के कारण इंग्लैण्ड की कृषि व्यवस्था भी तबाह होने की कगार पर थी। बिस्मार्क के नेतृत्व में जर्मनी भी तेजी से आगे बढ़ रहा था। अमेरिका व कनाडा से सस्ता अनाज इंग्लैण्ड के बाजारों पर कब्जा कर रहा था और इसके मिले जुले असर से इंग्लैण्ड की अर्थव्यवस्था मंदी का सामना कर रही थी। उसे अंतर्राष्ट्रीय बाजार में जर्मनी, अमेरिका के माल का सामना करना पड़ रहा था। इंग्लैण्ड की तुलना में जर्मनी, अमेरिका में मजदूरी कम थी, इसलिए वहां माल उत्पादन कम कीमतों पर सम्भव था। इन चुनौतियों के मध्य इंग्लैण्ड का उपनिवेशों में बसा शिक्षित समाज साम्राज्यवाद को लेकर अधिक बेचैन हो उठा था। असुरक्षा बोध उसे जकड़ने लगा था। इसलिए वह 1857 की बगावत में मिली शानदार विजय की कहानियां बार बार प्रस्तुत कर रहा था जिससे इंग्लैण्ड के समूचे जनमानस को विश्वास दिलाया जा सके कि उसके हाथ से अभी कुछ फिसला नहीं है और उसकी शक्ति पहले की तरह अक्षुण्ण है।[21]

इन उपन्यासों व उपन्यासकारों की ऐतिहासिक नाकामी यही है कि इनकी कुछेक रचनाएं छोड़ शेष सभी उपन्यास अपने समय को नहीं पार कर सके। यानी आज उनका ऐतिहासिक दस्तावेजों के रूप में ही महत्व सीमित होकर रह गया है। अंग्रेज नायकों के रूप में जिस *एम्पायर बॉय* की अवधारण ाा पर ये केन्द्रित थे उन्हीं साम्राज्यों के विश्वव्यापी प्रतिरोध ने इन उपन्यासों की छिछली राजनीति का न सिर्फ उद्घाटन किया बल्कि उसे पूरी तरह से अस्वीकार भी कर दिया। उस समय ब्रिटिश राज की पुनर्स्थापना के लिए जो क्रूर अभियान छेड़ा गया था, उसकी क्रूरता को गायब कर गोरी जातियों के अधिकार को केन्द्र में लाकर जमा दिया गया। लॉर्ड कैनिंग, मेजर निकोसलन, लॉरेंस, व्हीलर, ऑटरम, हैवलॉक, कोलिन कैम्पबेल व मेजर हडसन जैसे अंग्रेज कमाण्डरों का नामोल्लेख भी इन उपन्यासों की लोकप्रियता का प्रमुख आधार था। हालांकि ये लोग उपन्यासों के मुख्य चरित्र के रूप में कम ही आते हैं। उपनिवेशों में कई तरह की अनिश्चितताओं, विद्रोह होने के खतरों व विश्वासघात के संकटों के बीच रह रहे अंग्रेजों को ये उपन्यास यह आश्वासन देते थे कि उनकी प्रजाति कितनी पराक्रमी व चतुर है तथा हर तरह के संकटों का सामना करने के लिए प्राकृतिक व सामरिक रूप से पूरी तरह तैयार है। यह उपनिवेशवाद धरती के कोने कोने तक यूनियन जैक लहराना चाह रहा था, हर खेत खदान पर कब्जा करना चाहता था, हर जगह अपनी हथियारबंद सेनाएं तैनात कर रहा था और समुद्रों, धरती व आकाश को जीतना चाह रहा था। यह प्रकृति व मनुष्य दोनों को समान भाव से अपने अधीन करना चाहता था। इसने मनुष्य को सभ्य बनाने का दावा किया पर सभ्यता का यह मिशन अनगिनत बर्बरताओं व पाशविकता से ही अपनी शक्ति अर्जित करता था। श्वेत मनुष्य अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए राष्ट्रवादी नहीं बनता था बल्कि उपनिवेशों में पहुंच कर उन्हें लूटने व अधीन करने को अपना राष्ट्रवादी दायित्व मानता था। इसी ब्रितानी राष्ट्रवाद को दुनिया भर के युद्धस्थलों में आजमाया गया और फिर इसी को उपन्यासों की कथा संरचना की मुख्य संचालक शक्ति बना कर इन उपन्यासों को खास पॉलिटिकल हथियार में तब्दील कर दिया गया।

लैंगिकता के प्रश्न

हाल के वर्षों में कई इतिहासकारों ने उपनिवेशवादियों व उपनिवेशों के सम्बंधों के मध्य कैसे पुरुष व स्त्री का मनोविज्ञान सक्रिय था इसके बारे में नारीवादी दृष्टि से शोध किया है। उदाहरण के लिए इंद्राण ी सेन ने इस सम्बंध में लिखा है – औपनिवेशीकरण की प्रक्रिया का भी लैंगिक आधार विकसित

कर लिया गया था। साम्राज्यवादियों की मजबूत व मर्दाना छवि की तुलना में उपनिवेशों की छवि का स्त्रीकरण कर दिया गया। उपनिवेशों को ऐसी असहाय व लाचार स्त्री बताया गया जो स्वयं पर किसी का स्वामित्व स्थापित किये जाने की प्रतीक्षा कर रही है।[22]

उल्लेखनीय है कि 19वीं सदी में भारत ही नहीं बल्कि कई महाद्वीपों जैसे अफ्रीका महाद्वीप के बारे में कथानकों में उसकी तुलना निष्क्रिय स्त्री शरीर से की गयी थी। भव्य हरियाली व पहाड़ आदि की मौजूदगी उन्मादजनक स्त्री यौनिकता की प्रतीक हैं। ब्रिटिश काल की एक अन्य महत्वपूर्ण लेखिका मॉड डाइवर ने भारत को ऐसे स्त्री देश के रूप में देखा जो पर्दे के पीछे रहने वाली राजकुमारी की भांति अकेली तथा सम्मोहक है। उपनिवेशों का स्त्रीकरण श्वेत मर्द के अतिपौरुषीकरण का ही स्वाभ. ाविक प्रतिफलन था।[23] सभ्य अंग्रेज पुरुषों के व्यवहार की रीकोडिंग की गयी और साम्राज्यवाद के मोर्चे पर विजयी होने के लिए मध्यकालीन वीर परम्परा को पुनः उद्बोधित किया गया। मर्दाना एकजुटता तथा मर्दाने सहचर को खास महत्व प्रदान किया गया। उल्लेखनीय है कि परम्परागत मिथक शास्त्र में मर्दानेपन के भाव का सम्बंध नैतिक चारित्रिक दृढ़ता से अधिक रहा है। प्राचीन यूनानी नायक भी किसी वृहत्तर उद्देश्यों के लिए संघर्ष करने की प्रक्रिया में ही नायक बन कर उभरते हैं। पर नये संदर्भों में यह शारीरिक ताकत का पर्याय बन गया। पब्लिक स्कूलों की संस्कृति स्वयं में विजय प्राप्त करने व दूसरों को पराजित करने के दर्शन पर आधारित थी। इसीलिए इन पब्लिक स्कूलों की शिक्षा में स्टेमिना, अनुशासन, टीम भावना और एथलेटिक्स की भूमिका व्यक्तित्व निर्माण के लिए खास तौर पर रेखांकित की गयी क्योंकि ये चीजें उपनिवेशों में शासन के लिए विशेष उपयोगी समझी जाती थीं। पीड़ा सहने की क्षमता को भी गौरवान्वित किया गया जिससे बड़े से बड़े संकट में भी अंग्रेज जाति की अपराजेयता के प्रति विश्वास बना रहे। इसलिए स्टेशन रोमांस के उपन्यास हों या 1857 पर आधारित कृतियां, अधिकांश के नायक फौजी पृष्ठभूमि के हैं जो पोलो खेलते हैं, शेर, चीते मारते हैं या घुड़सवारी करते हैं। ऐसे पुरुषों का बड़े पैमाने पर विदेशी उपनिवेशों में निर्यात किया गया जिससे 19वीं सदी के मध्य में खुद इंग्लैण्ड में स्त्री, पुरुष अनुपात असंतुलन का शिकार हो गया। यह अनुपात घट कर 1050ः 1000 हो गया। यानी प्रति एक हजार पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या 1050 तक पहुंच गयी। स्त्रियों की अधिक आबादी के कारण प्रायः अविवाहित रह जाने वाली अंग्रेज स्त्रियों को सरप्लस वूमेन भी कहा जाता था। 1857 के उपरांत भारत जैसे उपनिवेशों में अंग्रेज स्त्रियों की तादाद बढ़नी शुरू हुई। इसका एक कारण ये था कि भाप के जहाज आने से समुद्री यात्राओं में कम समय लगता था। दूसरा कारण यह था कि भारत में विवाह योग्य लड़के अधिक संख्या में उपलब्ध थे।[24] विवाह को स्त्री आदर्श के रूप में परिभाषित किया जाता था। इसलिए इंग्लैण्ड से भारत में लड़के ढूंढने की चाह लिए लड़कियां आती थीं और उनके बारे में कई तरह के भद्दे मजाक व व्यंग्य प्रचलित थे। अंग्रेज सरकार ने भी औपनिवेशिक अस्मिता का अधिक प्रदर्शन करने, अंग्रेजी जीवन शैली का प्रसार करने तथा अंतर्प्रजातीय विवाहों की गुंजाइश कम करने के लिए इसे बढ़ावा दिया। जब भारत में अंग्रेज स्त्रियों की संख्या बढ़ना आरम्भ हो गयी तो अंग्रेजों की अपनी पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने उपनिवेशों में प्रजाति व वर्ग के संयोजन के सहारे उनकी लैंगिकता के नये रूपों तथा प्रारूपों का निर्माण करना आरम्भ कर दिया। 1857 की थीम पर केन्द्रित उपन्यासों में ये प्रयास नजर आते हैं। जैसे अंग्रेज स्त्रियों का चित्रण इस प्रकार से है जिससे कि सिद्ध होता हो कि साम्राज्य को बनाने व उसकी रक्षा में जो त्याग व श्रम लगता था, उसमें उन्होंने पुरुषों का पूरी तरह साथ दिया। साथ ही उनकी शारीरिक शुचिता व मर्यादा इतनी अधिक महत्वपूर्ण बना दी जाती है कि वे दुश्मनों के हाथ में पड़ने के भय से हिन्दू स्त्रियों की भांति आत्महत्या करते हुए भी दिखा दी जाती हैं। इस बात के उदाहरण भी उपलब्ध हैं कि लड़ाई के दौरान अपहृत या गुम अंग्रेज युवतियों को खुद उनके परिवारों ने मृत घोषित कर दिया और जब उन्होंने घर लौटना चाहा तो उन्हें स्वीकारने से मना कर दिया गया।[25]

इसके अतिरिक्त खुद को नेटिव से अलगाने के लिए उन्हें मेमसाहब के रूप में कई सांस्कृतिक तथा राजनीतिक प्रतीकों के प्रति वफादार भी बनना पड़ा। कुछ प्रमुख उपन्यासों जैसे *मरियम, ऑन द फेस ऑफ द वॉटर* व *रजब* : द जगलर इत्यादि में अंग्रेज स्त्री की विक्टोरियाई मूल्यों के प्रति अटूट वफादारी भी गोरी प्रजाति को कलंकित करने के लिए प्रयासरत भारतीयों की संस्कृति की तुलना में अधिक गौरवान्वित की गयी है। भूलना नहीं चाहिए कि गोरी स्त्रियां भारत में स्थानीय निवासियों की तुलना में तो ऊंची मानी जाती थीं पर अपनी ही प्रजाति के मर्दों के बीच उनकी हालत हीनतर समझी जाती थी। इस ओर भी समीक्षकों ने इशारा किया है कि किस तरह अंग्रेज स्त्रियों के पराये मर्दों के साथ शारीरिक रिश्तों पर ये औपन्यासिक कथाएं लगभग खामोश हैं। नेटिव कहे जाने वाले लोगों के साथ अंग्रेज नायिकाओं के प्रेमप्रसंग बेहद दुर्लभ हैं। इसका कारण यह भी है कि गोरी स्त्रियों के दैहिक सम्बंधों के चित्रण की अनुपस्थिति एक प्रकार से उनकी सैक्सुअलिटी को नकारे जाने के तरीके के रू प में इस्तेमाल की गयी है। खुद गोरी स्त्रियों की सेक्सुलिटी विक्टोरियाई आदर्शों के तहत समस्या के रूप में देखी जाती थी और उसके अनियंत्रित होने का भय यूरोपीय पितृसत्ता को परेशान करता था। पितृसत्ता अगर अंग्रेज स्त्रियों पर विक्टोरियन आदर्शों का सहारा लेकर थोपी जा रही थी, तो मर्दों से अपेक्षा थी कि वे यूरोपीय प्रजातीय उच्चता से किसी प्रकार समझौता नहीं करेंगे। इसीलिए 1850 के दशक से पहले के अंग्रेज जहां हुक्का, हरम, विवाह व शतरंज के प्रयोग के कारण भारतीय संस्कृति के निकट माने जाते थे, वहीं 1857 के बाद उन्होंने भारतीय समाज से सांस्कृतिक दूरी को सायास बढ़ाना आरम्भ कर दिया। इसीलिए उपन्यासों में भी भारतीय स्त्रियों से उनके दैहिक रिश्तों के बारे में संदेह का माहौल है। अंग्रेज नायक अगर किसी हिन्दू स्त्री से प्रेम करता है तो औपन्यासिक कथा में उस स्त्री को किसी दुर्घटना या बीमारी में मरवा दिया जाता है। जैसे कि फिलिप मीडोज टायलर के उपन्यास *सीता* में कथा नायिका सीता की मौत अंग्रेज नायक को इस दुविधा से उबार देती है कि वह हमेशा ही किसी हिन्दू एशियाई स्त्री के साथ रहे और अपनी संस्कृति से अलगाव पैदा कर ले। सीता की मौत और उसका इंग्लैण्ड में सजातीय अंग्रेज स्त्री से विवाह स्थितियों को सामान्य बनाने में सहायक होता है। उपनिवेश की संस्कृति अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर अंग्रेजों की प्रभु संस्कृति पर ग्रहण लगाने में नाकाम हो जाती है। भारतीय स्त्रियों से अंग्रेज नायक के प्रेम व अंत में उन्हें दुर्घटनाओं में मरवा देने की थीम सीता उपन्यास के अतिरिक्त द *रानी : ए लीजेण्ड ऑफ इंडियन म्यूटिनी* तथा *ऑन द फेस ऑफ द वॉटर* में भी दिखती है। अंतरप्रजातीय सम्बंधों का साम्राज्यवाद के विमर्श में कोई स्थान नहीं था, इसलिए एशियन नायिकाओं की मौत ही यूरोपीय नायकों की मुक्ति को सम्भव बनाती है।

1857 की थीम पर केन्द्रित अंग्रेजी उपन्यासों के एंग्लो इंडियन लेखन मुख्य रूप से दो प्रकार का है। उपन्यासकार भारत से भावनात्मक अलगाव के पक्षधर हैं और उस पर क्रूर औपनिवेशिक नियंत्रण के हिमायती हैं। इनकी इस दृष्टि के कारण प्रायः इनकी कृतियां अधिक भावहीन, एकरस व असाध्य यांत्रिक दृष्टिकोण लेकर चलती हैं और भारतीय चरित्रों के अपराधों को दिखा कर उन्हें समस्त मानवीयता से वंचित कर देती हैं। रानी लक्ष्मीबाई, नाना साहब, अजीमुल्ला खां व बहादुरशाह जफर जैसे सभी पात्र ऐसे प्रस्तुत किये जाते हैं जैसे वे विदेशी हैं और यहां बसे शांतिप्रिय व न्यायप्रिय अंग्रेजों को लूटने के लिए आक्रमण कर रहे हैं। उनके युद्धकालीन कृत्यों व प्रतिरोध को उनके चरित्र की स्वाभाविक क्रूरता की तरह प्रस्तुत किया जाता है। इसके उलट अंग्रेजों की युद्धकालीन क्रूरता को उनकी अनैतिकता नहीं बल्कि व्यक्तित्व के शौर्य प्रदर्शन व रणनीति निर्माण के स्वाभाविक गुण के रूप में याद किया जाता है। स्त्री पात्रों का प्रयोग भी दो तरह से किया जाता है। एक ओर अंग्रेज नायकों के आगे उनके समर्पण को स्त्रीकृत उपनिवेशों के समर्पण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है तो दूसरी ओर स्त्री को अंग्रेजों की गुलामी की भीख मांगते दिखा कर अंग्रेजों के शासन का औचित्य तैयार किया जाता है। दूसरी श्रेणी के उपन्यासकार वे हैं जो भारतीयों से सहानुभूति, उनकी सभ्यता से लगाव तथा

tadbhav.com home page

उनके सामाजिक जीवन से सामंजस्य स्थापित करने का पक्ष लेते हैं। वे कम्पनी प्रशासन के अमानवीय कार्यों की निन्दा करते हैं और विद्रोह के लिए कम्पनी को भी जिम्मेदार ठहराते हैं। पर उनका संतुलन बनाने का यह दृष्टिकोण भी भारतीयों की स्वतंत्रता के विषय पर आकर स्खलित हो जाता है और वे भी कट्टरवादियों के उसी समूह के साथ खड़े हो जाते हैं जो भारत पर अंग्रेजी शासन को बनाये रखने को सही मानता है। इस पूरे एंग्लो इंडियन लेखन में सिर्फ उपनिवेशक व उपनिवेशित के सम्बंध ही महत्वपूर्ण नहीं हैं बल्कि खुद अंग्रेज स्त्रियों की उनके समाज में स्थिति, साम्राज्य निर्माण में उनकी लैंगिकता का विशेष रणनीतिक उपयोग, यूरेशियन समुदाय के प्रति दृष्टिकोण व भारतीय स्त्री का चित्रण व अंग्रेज स्त्री की लैंगिक स्थिति से उसकी तुलना जैसे बारीक प्रश्न भी उभरते हैं जो विश्लेषण के क्रम में विचारोत्तेजक उत्तरों तक पहुंचने में हमारी सहायता करते हैं। भारतीय राष्ट्रवाद के प्रश्न 1857 के विद्रोह में भले ही कम महत्वपूर्ण दिखते हों और इसे बाद की नैशनलिस्ट हिस्टीरियोग्राफी द्वारा सुविधाजनक ढंग से प्रयोग किये जाने के रूप में देखा जाये, पर भूलना नहीं चाहिए कि अंग्रेजों के लिए 1857 की लड़ाई को जीतना राष्ट्रवादी दायित्व भी था क्योंकि वे उपनिवेशों पर आधिपत्य को गोरी ब्रिटिश प्रजाति के राष्ट्रीय स्वाभिमान व शक्ति के प्रश्न से अलग करके नहीं देख सकते थे। यानी विद्रोह को दबाने वाला अंग्रेज राष्ट्रवादी है पर विद्रोही अभी अपने संघर्ष को राष्ट्रवाद की विशेषताओं के अनुरूप ढालने में अक्षम हैं। इसका प्रमाण विद्रोह को आधार बना कर लिखे गये अंग्रेजी उपन्यासों में दिखता है जहां प्रायः अंग्रेज अधिकारी व फौजी नायक बहादुरी से संघर्ष करता है और फिर अपने देश लौट जाता है और बहादुरी के लिए पुरस्कृत होकर अपने देश की शान बढ़ाता है। ये समस्त एंग्लो इंडियन उपन्यास उपनिवेशों की पराजय का कथात्मक उत्सव मनाते हैं। इन उपन्यासों में इतिहास के हवाले हैं, घटनाएं व चरित्र पूरी तरह से इतिहास पर आधारित हैं, पर इनमें इतिहास का नकार भी है।[26] यह नकार भारतीयों के पक्ष को पूरी तरह से गायब किये जाने के रूप में प्रकट होता है इसलिए इतिहास की मूल संवेदना के साथ अन्याय भी करता है। जीते हुए उपनिवेशों की जमीन पर बैठ कर साम्राज्यवाद की जो प्रशंसा कर रहे थे, उनकी तर्क प्रणाली यूरोप की प्रसारवादी नीति का अंग थी। इस साम्राज्यवाद ने जैसाकि मार्क्स ने लिखा था, भारतीय समाज के पूरे ढांचे को तोड़ डाला और उसके पुनःनिर्माण के तो कोई चिह्न नहीं दिखायी दे रहे हैं। उपनिवेशों पर ऐसा प्रभुत्व, उसका ऐसा उन्मुक्त शोषण व दमन इतिहास का वह अध्याय है जिस पर उस समय के वे एंग्लो इंडियन उपन्यासकार भी खामोश हैं जो 1857 की कथित भारतीय क्रूरताओं का वर्णन करने में अपने विशेष ज्ञान का परिचय देते हैं। पेड़ से लटकी लाखों बागियों की लाशें अदालतों की कार्रवाई से ही नहीं, उपन्यास कथाओं से भी बाहर थीं और अर्ध बर्बर विजेता प्रजाति उपन्यासों के संसार में भी उपनिवेशों को अपने पैरों तले रौंद रही थी। उन पर मार्क्स के ही शब्दों में, निकम्मी व खोखली अर्थव्यवस्था को थोप रही थी। दमन व उसका समर्थन करने वाली कथाओं का जैसा पूरक रिश्ता एंग्लो इंडियन लेखकों के उपन्यास में दिखता है, वह शायद संसार का दुर्लभ साहित्यिक तथा राजनीतिक संयोग है।

संदर्भ

1. भूपाल सिंह : ए सर्वे ऑफ एंग्लो इंडियन फिक्शन, कर्जन प्रेस 1934, प्राक्कथन में 2. शैलेन्द्र धारी सिंह : नॉवेल्स ऑन द इंडियन म्यूटिनी, अर्नाल्ड हेनमान इंडिया, 1973, पृ. : 34 3. वही, पृष्ठ : 143 4. गौतम चक्रवर्ती, द इंडियन म्यूटिनी एंड द ब्रिटिश इमेजिनेशन, गिलेन बियर, भूमिका से 5. इंद्राणी सेन, वूमेन एंड एम्पायर, रिप्रजेंटेशंस इन इद राइटिंग ऑफ ब्रिटिश इंडिया, ओरियंट लांगमैन लिमिटेड, 2002 पृ. : 21 6. शैलेन्द्र धारी सिंह पृ. : 47 7. इंद्राणी सेन, पृ. : 43 8. वही, पृ. : 125 9. वही, पृ. : 129 10. शैलेन्द्र धारी सिंह, पृ. : 61 11. इंद्राणी सेन, वही पृ. : 34 12. इरफान हबीब, 1857 नवजागरण और भारतीय भाषाएं (सम्पादक : शम्भूनाथ), केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा, 2008 पृ. : 34 13. इंद्राणी सेन, इनस्क्राइबिंग द रानी ऑफ झांसी इन कलोनियल म्यूटिनी फिक्शन, ईपीडब्ल्यू – मई 12-18 2007, पृ. : 1756-1760 14. शैलेन्द्र धारी सिंह, वही, पृ. : 170 15. भूपाल सिंह, वही, पृ. : 261 16. एरिक स्टोक्स, 1857 : बगावत के दौर का इतिहास (संपा – मुरली मनोहर सिंह व रेखा अवस्थी) ग्रंथशिल्पी प्रकाशन 2009, पृ. : 47 17. शैलेन्द्र धारी सिंह, वही पृ. : 100 18. वही, पृ. : 100 19. जोसेफ बेकर (सम्पादित), द रीइंटरप्रिटेशन ऑफ विक्टोरियन लिटरेचर, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस 1950 पृ. : 72-73 20. इंद्राणी सेन, वही पृ. : 71 21. जॉर्ज डब्ल्यू साउथगेट, इंग्लिशश इकॉनमिक हिस्ट्री, जे.एम. डेण्ट एंड संस लिमिटेड, लंदन, 1950 पृ. : 343 22. इंद्राणी सेन, वही पृ. : 39 23. वही पृ. : 39 24. वही पृ. : 4 25. वही पृ. : 80 26. फ्लोमिनियो निकोरा : द म्यूटिनी नॉवेल : लिटरेरी रिस्पांस टु द इंडियन सिपॉय रिबेलियन, प्रेस्टीज बुक्स 2009, पृ. : 80